5 राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय और सरकारी कर्ज और नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं : एक मध्यावधि दृष्टिकोण

राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय के लिए मध्यावधि दृष्टिकोण का निर्धारण मांग दर (जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है और जिसका मौद्रिक नीति दर के लिए सामान्यतया एक परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है) और उत्पादन अंतराल, मुद्रास्फीति अंतराल और जी डी पी अनुपात में राजकोषीय घाटे के बीच एक आनुक्रमिक संबंध के अनुमान पर आधारित है। वर्तमान परिस्थिति में, मुद्रास्फीति नियंत्रण की संभावना तथा उत्पादन अंतराल को नकारात्मक रखते हुए, मध्यावधि में अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर प्रवृत्ति की ओर लौटने की दृष्टि से निवेश को प्रोत्साहित करने की उच्च प्राथमिकता है। इस संदर्भ में, एक व्यवस्थित और गुणात्मक राजकोषीय समायोजन मध्यावधि में, सामान्य रूप से समष्टि आर्थिक स्थिरता और विशेष रूप से संवृद्धि उद्देश्य पर विचार करने के लिए मौद्रिक नीति को अधिक खुली ऊँचाई (हेड रूम) प्राप्त होगी। कर्ज/नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्था के मुद्दे पर वैश्विक वित्तीय संकट के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय अनुभव राजकोषीय, मौद्रिक और कर्ज प्रबंध के एक साथ गुंथे होने को विशिष्टता प्रदान करता है और इस प्रकार मौद्रिक और कर्ज प्रबंधकों और राजकोषीय प्राधिकारियों के बीच निकट समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करता है। भारत में वर्तमान परिस्थिति में, सरकारी उधार राशियां दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही हैं और सामान्य आर्थिक वातावरण विकसित होती हुई राजकोषीय स्थिति की कड़ी निगरानी के लिए आधार प्रस्तुत करता है। इस संदर्भ में, सरकार के साथ अधिक गहन समन्वय के साथ सरकारी कर्ज प्रबंध में केंद्रीय बैंक की संलग्नता की निरंतरता मध्यावधि के लिए उपयुक्त दृष्टिकोण प्रतीत होता है।

1. प्रस्तावना

5.1 वैश्विक वित्तीय संकट ने मौद्रिक राजकोषीय समन्वय के इतिहास में एक मोड़ बिन्दु चिह्नित किया है, जिसमें लगभग सभी देशों में सरकारें और केंद्रीय बैंक वित्तीय स्थिरता की पुनः स्थापना के लिए एक अभूतपूर्व और गैर-परंपरागत पैमाने पर कार्य कर रहे हैं। जहाँ अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सरकारों ने असफल निवेश बैंकों, बैंकेतर और बीमा कंपनियों को बेलिंग आउट करने और यहाँ तक कि उनका एकमुश्त राष्ट्रीयकरण करने के लिए एक निर्णयात्मक कार्रवाई की और वास्तविक अर्थव्यवस्था पर संकट के प्रभाव को कम करने के लिए काफी अधिक राजकोषीय प्रोत्साहन प्रदान किया, केंद्रीय बैंकों ने बैंकों व गैर-बैंकों के लिए समान रूप से चलनिधि खिड़कियां खोल दी और मुद्रा स्वैप लाइन्स प्रारंभ कर दी।

5.2 संकट के दौरान प्रारंभ की गई गैर-परंपरागत राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों से निकासी में हालांकि, उसी प्रकार का सामंजस्य नहीं दिखाई दिया। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, चूंकि विद्यमान घाटे के आकार के अतिरिक्त मितव्ययिता उपायों के प्रति राजनैतिक मतैक्य के अभाव के कारण राजकोषीय बहिर्गमन एक कठिन और दीर्घकालिक प्रक्रिया प्रतीत होती है, आर्थिक सुधार की कमज़ोर स्थिति को अपेक्षित बढ़ावा देने के लिए मौद्रिक नीति का समंजनकारी बने रहना जारी रहा है। यूरो क्षेत्र में, प्रतीयमानतः अड़ियल राष्ट्रिक कर्ज समस्याओं ने, राजकोषीय अनुशासन की पुनः स्थापना करने के लिए अनेक पहल करने के बावजूद, एक स्थायी निभावशील मौद्रिक नीति रुख का होना आवश्यक बना दिया है, फिर भी हाल की अवधि में अर्थव्यवस्था के संकुचन की गति से कुछ उपशमन दिखाई दिया है। दूसरी ओर, उभरती अर्थव्यवस्थाएं, संकट से शीघ्र उबरने और मुद्रास्फीतिकारी दबावों के उभरने की दृष्टि से राजकोषीय और मौद्रिक दोनों, सुदृढ़ीकरण का समसामयिक रूप से पालन कर रही हैं। हालांकि, बाद में, वैश्विक संवृद्धि में शिथिलता, देशी संरचनात्मक रुकावटों और पण्य और/अथवा आस्ति कीमत दबावों के समाधान के लिए (विगत दिनों में) मौद्रिक नियंत्रण में वृद्धि ने उभरते बाजार वाले देशों के भावी संवृद्धि-पथ को प्रभावित किया। इससे हाल की अवधि में कुछ मौद्रिक सुलभता की स्थिति बनी, हालांकि, कुछ देशों में आगे और निभाव के लिए नीतिगत स्थान कम हो गया है।

5.3 सामान्य रूप से, संकट के बाद, क्रमशः यह बात महसूस की जा रही है कि वैश्वीकरण की परिपक्वता के साथ ही और विशेष रूप से वित्तीय वैश्वीकरण के गहन होने तथा अर्थव्यवस्था के अदृश्य जोखिमों के प्रकट होने के साथ ही संयुक्त रूप से कार्रवाई करने की गुंजाइश के व्यापक हो जाने की संभावना है जहाँ सरकारों और केंद्रीय बैंकों को एक दूसरे के क्रियाकलापों की पहुँच (डोमेन) का सम्मान करते हुए मेल-मिलाप के साथ अधिक बारंबार कार्य करना पड़

सकता है। वर्धमान राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय की आवश्यकता को प्रमाणित करने की अंतर्राष्ट्रीय नीतिगत सोच में निहित बदलाव के तात्कालिक प्रकटीकरण के लिए नयी संस्थागत कॉलेजियल व्यवस्थाएं हैं जिनमे केंद्रीय बैंक, अन्य विनियामक और सरकार शामिल है, जिन्हें वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहित करने का प्राथमिक उत्तरदायित्व सौंपा गया हैं ।

5.4 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय और 2011 में अनेक देशों में सरकारी घाटे में कमी से प्राप्त सकारात्मक अनुभव के बावजूद, आइ एम एफ के ताजा राजकोषीय मोनीटर (अक्तूबर 2012) ने अनेक उन्नत और कुछ उभरती बाजार अर्थ व्यवस्थाओं में बहुत उच्च सार्वजनिक कर्ज विस्तार आवश्यकताओं से उत्पन्न उत्थित राजकोषीय भेद्यताओं को विशिष्टता से दर्शाया है, जबकि उसने अनेक देशों में क्रियाकलाप की सामान्य शिथिलता के संदर्भ में राजकोषीय समायाजन की एक व्यवस्थित गति की सिफारिश की। उक्त दस्तावेज से भी यह पाया गया है कि सार्वजनिक वित्त को मध्यावधि में सुदृढ़ स्तर पर रखा जाना एक प्राथमिकता होना चाहिए क्योंकि यह संवृद्धि के लिए एक मुख्य पूर्वापेक्षा के रूप में रहता है।

5.5 भारत में भी, वैश्विक वित्तीय संकट की अप्रत्यक्ष रुकावट से पीछा छुड़ाने के बाद राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रयासों का पुनरारंभ चुनौतियों से घिर गया है। वास्तव में, बारहवीं योजना के प्रथम वर्ष (2012-13) के दौरान एक मामूली सुधार के बावजूद वैश्विक आर्थिक संभावनाओं के प्रति महत्वपूर्ण जोखिम बने रहते हैं। इसके अतिरिक्त, हाल की सुलभता के बावजूद थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति में आगे और कमी आपूर्ति दबावों में कमी तथा राजकोषीय सुदृढ़ीकरण पर प्रगति आकस्मिक है। इसके अलावा, चूंकि 2012-13 के दौरान अब तक राजकोषीय घाटा उच्च रहा है, बारहवीं योजना के लिए अपेक्षित संसाधनों के उत्पादन के लिए राजकोषीय स्थिति में एक कायापलट अनिवार्य है। 2012-13 के केंद्रीय बजट में, वास्तव में, पिछले वर्ष के परिशोधित अनुमानों में राजकोषीय घाटे को घटा कर 5.9 प्रतिशत से जी डी पी के 5.1 प्रतिशत तक लाने का प्रस्ताव था। बजट में एफ आर बी एम अधिनियम में कुछ संशोधन भी प्रस्तावित थे। 29 अक्तूबर 2012 को वित्त मंत्री ने बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान एक राजकोषीय सुदृढ़ीकरण योजना अपनाने संबंधी सरकार के निर्णय की घोषणा की जिससे राजकोषीय घाटा 2012-13 में जी डी पी के 5.3 प्रतिशत से क्रमशः घट कर 2016-17 में जी डी पी का 3.0 प्रतिशत हो जाएगा। उसके बाद से सरकार द्वारा उठाये गये अधिकांशतः ईंधन सब्सिडी घटाने के महत्वपूर्ण कदमों से एक महत्वपूर्ण संकेतन प्रभाव पड़ा है यद्यपि 2012-13 के राजकोषीय घाटे पर उनका प्रभाव नगण्य होने की अपेक्षा है।

5.6 इस पृष्ठभूमि के सामने, इस अध्याय के खंड ।। में सुधार-पश्चात् अवधि में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच संस्थापित संबंध का निर्धारण किया गया है तथा मध्यावधि में उनके विकासवादी पथ के लिए कुछ निहितार्थों की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। यह प्रयोग, जो जॉली (2005) पर आधारित है, मांग दर के साथ एक आनुक्रमिक कार्य का अनुमान लगाता है- जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है और सामान्यतया मौद्रिक नीति दर के लिए एक परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है- चूंकि आश्रित परिवर्ती और मुद्रास्फीति अंतराल (अर्थात् थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर और उसके प्रवृत्ति घटक), उत्पादन अंतराल (अर्थात् जी डी पी का डी- टेंडेड अथवा चक्रीय घटक), जी डी पी में केंद्र के राजकोषीय घाटे का अनुपात (एक अवधि अंतराल के साथ) और एक -अवधि विलंबित मांग दर को व्याख्यात्मक परिवर्तियों के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। सुधार-पश्च अवधि के अधिकांशतः वार्षिक आंकड़े अनुमान लगाने के लिए प्रयुक्त होते हैं। अनुमानित समीकरण मध्यावधि में मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय घाटे, उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल के विकसित होते हुए पथ के निहितार्थों पर व्यापक दिशा-निर्देश प्रदान करता है।

5.7 इस अध्याय के खंड III में कर्ज प्रबंध नीतियों के क्रम-विकास तथा राजकोषीय और मौद्रिक-नीतियों के साथ, विशेष रूप से हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में, उनके गुंथे होने पर चर्चा की गई है, जिसने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुसंस्थापित प्रतिमानों के लिए चुनौतियां प्रस्तुत की हैं। जहाँ तक भारत का संबंध है, केंद्र सरकार के कर्ज प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण जल-विभाजक (वाटर शेड) के रूप में, केंद्र सरकार की कर्ज प्रबंध रणनीति बनाने के लिए 2008 में वित्त मंत्रालय में एक मध्यवर्ती कार्यालय की स्थापना किया जाना था। केंद्र सरकार के ऋण प्रबंध का कार्य संविधि द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक को सौंपा गया है। इसे आगे ले जाते हुए, फरवरी-अंत 2011 में प्रस्तुत केंद्रीय बजट में कहा गया है, ''सरकार, वित्त मंत्रालय में एक स्वतंत्र कर्ज प्रबंध कार्यालय की स्थापना करने की प्रक्रिया में है। एक मध्यवर्ती कार्यालय ने पहले ही कार्य करना प्रारंभ कर दिया है। अगले कदम के रूप में, मैं अगले वित्त वर्ष में भारतीय सार्वजनिक कर्ज प्रबंध बिल

लाने का प्रस्ताव करता हूँ।'' (वित्तमंत्री का बजट भाषण, पैराग्राफ 20) । मध्य -मार्च 2012 में 2012-13 के लिए प्रस्तुत केंद्रीय बजट में, वास्तव में, संसद के बजट सत्र में भारतीय सार्वजनिक कर्ज प्रबंध एजेंसी बिल प्रस्तुत करने का प्रस्ताव रखा गया था। हालांकि, इस प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण पुनर्विचार भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर सुब्बाराव द्वारा पहले, अंतर्राष्ट्रीय निपटान के लिए बैंक में 9 मई 2011 को केंद्रीय बैंक अभिशासन दल की बैठक में प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत कर दिया गया था जहाँ उन्होंने निश्चयपूर्वक कहा, ''जहाँ तक मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता प्राप्त करने के ओवर आर्चिंग उद्देश्य के भीतर प्रस्तुत संदर्भ में विभिन्न ताल-मेल के साथ सामंजस्य बिठाने के संस्थागत तंत्र हैं, केंद्रीय बैंक से कर्ज प्रबंध को अलग किया जाना एक उप-इष्टतम विकल्प होना प्रतीत होता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी, संकट के बाद उभरती हुई बुद्धिमानी मौद्रिक नीति कार्यों, वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध के बीच स्वतंत्रता तथा राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध के साथ केंद्रीय बैंक की निकट संबद्धता की आवश्यकता को स्वीकार करती है।'' पश्च-वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में, इस खंड में उन मुददों पर चर्चा की जा रही है जो मध्यावधि में मौद्रिक और कर्ज प्रबंध के समन्वय की संस्थागत व्यवस्थाओं पर अतिक्रमण कर सकते हैं। अंतिम खंड उक्त चर्चा का समाहार करता है।

II. राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय: मध्यावधि के लिए दृष्टिकोण

पिछली प्रवृत्तियों का पुनः समर्पण

5.8 प्रारंभ करने से पूर्व, 1991-92 के बाद से राजकोषीय और मौद्रिक प्रबंध की कहानी का पुनः समर्पण आवश्यक है, क्योंकि मध्यावधि दृष्टिकोण का निर्धारण करने के लिए विकसित होती हुई प्रवृत्तियों का इस्तेमाल किया जायगा।

राजकोषीय प्रवृत्तियां

5.9 1990-91 में बाह्य भुगतान संकट के परिणामस्वरूप राजकोषीय सुधारों सहित संरचनात्मक सुधारों के प्रारंभ के पश्चात्, 1990 के दशक के प्रथमार्ध के दौरान राजकोषीय असंतुलन सामान्यतया कम हो गया किन्तु अधिकांशतः संवृद्धि में गिरावट और बढ़ते हुए ब्याज भुगतानो तथा मजदूरी और वेतन द्वारा उत्पन्न कर राजस्व की शिथिलता के कारण द्वितीयार्ध के दौरान फिर बढ़ना शुरू हो गया था (चार्ट V.1)। बाद में, चूंकि जी डी पी के सापेक्ष ब्याज भुगतान कम होने शुरू हो गये (सामान्य मौद्रिक सुलभता के कारण) और काफी अधिक इस कारण से कि 2004-05 में राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम के अधिनियमन एवं कार्यान्वयन होने के अतिरिक्त 2007-08 में समाप्त तीन लगातार वर्षों के दौरान 9 प्रतिशत से अधिक की सुदृढ़ संवृद्धि हुई थी, जिसने राजस्वों को बढ़ाने में मदद की थी, राजकोषीय असंतुलन फिर से कम होने शुरू हो गये थे। एक प्राथमिक अधिशेष, वास्तव में, 2003-04, 2004-05, 2006-07 और 2007-08 के दौरान प्राप्त किया गया था। वास्तविकता में, राजकोषीय घाटा 2007-08 में कम होकर जी डी पी का 2.5 प्रतिशत रह गया जो सुधार की शुरुआत के बाद से सबसे कम स्तर था। हालांकि 2008-09 और 2009-10 के दौरान संवृद्धि पर वैश्विक वित्तीय संकट का प्रतिकूल अप्रत्यक्ष प्रभाव टालने के लिए किये गये राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों का परिणाम घाटा उपायों में तीव्र वृद्धि के रूप में सामने आया था। अर्थव्यवस्था में शीघ्र सुधार होने के साथ, 2010-11 में राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रयास किये गये, जिन्हें दूर-संचार सेवाओं से राजस्व में काफी अधिक एकल आदेश उत्पादन द्वारा समर्थन मिला था। भारी मात्रा में प्रत्यक्ष कर वापसियों और उच्चतर सब्सिडियों के साथ 2011-12 में संवृद्धि में तीव्र गिरावट के परिणामस्वरूप राजकोषीय असंतुलनों में तीव्र वृद्धि हुई। निरर्थक रूप से, पूंजीगत व्यय का अंश, जैसा कि परंपरागत

चार्ट V. I : केंद्र सरकार के मुख्य घाटा संकेतक

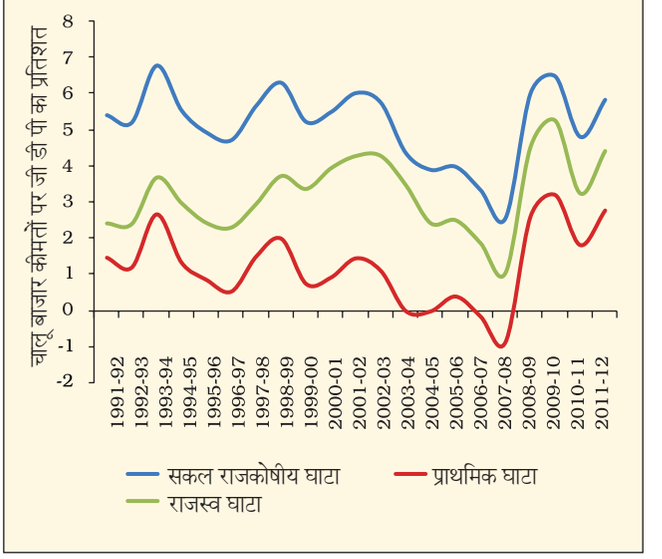

रूप से परिभाषित किया गया है, सामान्यतः कुल सरकारी व्यय में 1991-92 के लगभग 26 प्रतिशत से घट कर 2011-12 में 12 प्रतिशत के आस पास रह गया ।

मौद्रिक नीति रुख का क्रम-विकास

5.10 1991-92 में शुरू संरचनात्मक सुधार के वातावरण में मौद्रिक नीति निर्माण की सुविधा राजकोषीय असंतुलनों में कमी तथा तदर्थ खजाना बिलों के माध्यम से सरकार के बेलगाम अतिरिक्त मुद्रीकरण को सीमित करने की संस्थागत व्यवस्था द्वारा प्रदान की गई थी। दो अंकीय दरें रिकार्ड करने के बाद 1990 के दशक के प्रथमार्ध में मुद्रास्फीति काफी कम हो गई थी जो वैश्विक प्रवृत्ति को प्रतिबिंबित करती है तथा देशी सुधारों की ओर संकेत करती है। मौद्रिक नीति रुख की सुलभता को प्रतिबिंबित करते हुए, बैंक दर क्रमशः अक्तूबर 1991 के 12 प्रतिशत से घट कर अप्रैल 2003 में 6 प्रतिशत रह गई; जून 2000 में संपूर्ण चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) के संस्थापन के बाद बैंक दर अप्रैल 2003 और जनवरी 2012 के बीच 6 प्रतिशत पर अपरिवर्तित रखी गई, जब उसे सीमांत स्थायी सुविधा (एम एस एफ) के साथ पंक्तिबद्ध कर दिया गया था, जिसे क्रमशः एल ए एफ रेपो दर के साथ संबद्ध कर दिया गया था। दूसरी तरफ, एल ए एफ रेपो दर को अप्रैल 2001 के 9 प्रतिशत से घटा कर मार्च-अंत 2004 में 6 प्रतिशत कर दिया गया था। आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सी आर आर) को भी क्रमशः घटा कर 1991-92 के 15 प्रतिशत से अगस्त 2003 में 4.5 प्रतिशत कर दिया गया। तद्पश्चात्, संवृद्धि दर में महत्वपूर्ण वृद्धि तथा पूंजी आगमन में उछाल की वजह से नवंबर 2007 तक सी आर आर में 7.5 प्रतिशत की उल्लेखनीय वृद्धि हुई । खुला बाजार परिचालनों, एल ए एफ तथा बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) (अप्रैल 2004 में प्रारंभ) ने भी सुदृढ पूंजीगत आगमनों के समक्ष देशी चलनिधि की संवृद्धि को नियंत्रित करने में सहायता की।

5.11 एल ए एफ रेपो दर मार्च-अंत 2004 के 6 प्रतिशत से बढ़कर मार्च-अंत 2007 में 7.75 प्रतिशत हो गई थी, चूंकि मुद्रास्फीति में इस अवधि के दौरान कुछ वृद्धि हुई थी। 2008-09 के प्रथमार्ध के दौरान अंतर्राष्ट्रीय पण्य कीमतों में सख्ती के दबाव के कारण मुद्रास्फीति में तीव्र वृद्धि हुई जिससे यह आवश्यक हो गया था कि सी आर आर और एल ए एफ रेपो दर में जुलाई/अगस्त 2008 तक 9.0 प्रतिशत (प्रत्येक) की वृद्धि के रूप में एक मुद्रास्फीति निवारक नीतिगत अनुक्रिया की जाए। देशी चलनिधि में कमी तथा वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा उत्पन्न संवृद्धि में गिरावट का सामना करने के लिए अक्तूबर 2008 में मौद्रिक नीति रुख को अचानक बदलना पड़ा था। इसे प्रतिबिंबित करते हुए अक्तूबर 2008 में सी आर आर में तीव्र कमी करके उसे 6.5 प्रतिशत करना पड़ा तथा आगे और जनवरी 2009 में घटा कर 5.0 प्रतिशत किया गया। एल ए एफ रेपो दर को भी क्रमशः नीचे लाकर अप्रैल 2009 तक 4.75 प्रतिशत किया गया। देशी चल निधि को बढ़ाने के लिए गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति उपाय भी किये गये। निभावशील मौद्रिक नीति के साथ, जैसा कि पहले संकेत किया गया है, वसूली प्रक्रिया के समर्थन में राजकोषीय नीति भी स्फीतिकारी बन गई थी।

5.12 चूंकि वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभावों से अर्थव्यवस्था में शीघ्र सुधार हो गया था तथा मुद्रास्फीतिकारी दबावों ने जड़ें जमाना शुरू कर दिया था, एल ए एफ रेपो दर क्रमशः बढ़ कर अक्तूबर 2011 में 8.5 प्रतिशत हो गई और अप्रैल 2010 तक सी आर आर को 6.0 प्रतिशत तक बढ़ा दिया गया था। 2011-12 में संवृद्धि के तेजी से घट कर प्रवृत्ति से कम हो जाने के साथ और मुद्रास्फीति दर से सामान्य हो जाने के साथ मार्च 2012 तक सी आर आर को घटा कर 4.75 प्रतिशत कर दिया गया था और एल ए एफ रेपो दर को अप्रैल 2012 में (अर्थात्, 2012-13 के दौरान) घटा कर 8.0 प्रतिशत कर दिया गया था। उसके बाद एल ए एफ रेपो दर में आगे और कमी को स्थगित रखा गया क्योंकि राजकोषीय समायोजन के लिए अपेक्षित सम्पूरक नीतिगत कार्रवाई तथा निवेश वातावरण में सुधार का अभाव था। किन्तु, जुलाई 2012 में एस एल आर में 100 आधार बिन्दु की कटौती तथा सितंबर-अक्तूबर 2012 में सी आर आर में संचयी 50 आधार बिन्दु की कटौती के माध्यम से ऋण और चलनिधि स्थितियां आसान हो गई थी। सितंबर 2012 से शुरू करते हुए सरकार द्वारा सुधारों की एक श्रृंखला की घोषणा और मुद्रास्फीति दर में गिरावट के साथ, यद्यपि संवृद्धि में प्रवृत्ति से कम महत्वपूर्ण गिरावट हुई, एल ए एफ रेपो दर और सी आर आर में, प्रत्येक में 25 आधार अंक की कमी करते हुए उन्हें जनवरी 2013 में तीसरी तिमाही की मौद्रिक नीति की समीक्षा के दौरान क्रमशः 7.75 प्रतिशत और 4.0 प्रतिशत कर दिया गया।

आरक्षित मुद्रा और मुद्रा आपूर्ति के स्रोतों में परिवर्तन

5.13 1991-92 से 2007-08 तक की अवधि में आरक्षित मुद्रा की बकाया राशि में केंद्र सरकार को आर बी आई के निवल ऋण के

अंश में निरंतर गिरावट तथा आर बी आई के निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों के अंश में तदनुरूपी वृद्धि स्पष्ट रूप से दिखाई दी थी (चार्ट V.2) । इससे राजकोषीय असंतुलनों में सामान्य कमी तथा एक तरफ सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास तथा दूसरी ओर विदेशी मुद्रा बाजारों और पूंजी आगमनों के उदारीकरण की ओर लक्ष्य करके की गई पहल के साथ बजट घाटों के मुद्रीकरण को सीमित करने के लिए की गई संस्थागत व्यवस्था का प्रभाव प्रतिबिंबित होता है। वास्तव में, 1999-2000 और आगे से आरक्षित मुद्रा के प्रमुख स्रोत के रूप में सरकार को निवल आर बी आई ऋण के स्थान पर निवल विदेशी मुद्रा आस्तियां आ गई है। इसके अतिरिक्त, 2004-05 से 2007-08 तक की अवधि को इस बात के लिए चिह्नित किया गया था कि इसमें सुदृढ़ पूंजी प्रवाहों के समक्ष एम एस एस परिचालनों के माध्यम से अलग रखे गये सरकारी खाते में अतिरिक्त देशी चलनिधि का काफी अधिक मात्रा में सफाया किया गया था। वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभाव के अंतर्गत 2008-09 में प्रारंभ होकर केंद्र को निवल आर बी आई ऋण के अंशों तथा आरक्षित मुद्रा में आर बी आई की विदेशी मुद्रा आस्तियों की प्रवृत्तियों में तेजी से उलटाव आया है।

5.14 पूंजी प्रवाहों के उलटाव से उत्पन्न संकट तथा परिणामी विदेशी मुद्रा बाजार दबावों ने विदेशी मुद्रा विनिमय दर में अस्थिरता का सामना करने के लिए आर बी आई के बाजार परिचालनों को प्रेरित किया, जिससे देशी चलनिधि स्थितियों पर दबाव बढ़ गया। अनुक्रिया में निम्नलिखित के माध्यम से देशी चलनिधि में वृद्धि की गई थी: (i) ओ एम ओ के माध्यम से सरकार के राजकोषीय प्रोत्साहन-जनक बड़े बाजार उधार कार्यक्रम को मौद्रिक समर्थन; (ii) एम एस एस शेष राशियों का निवेश-मोचन और उनका अवपृथक्करण और (iii) एल ए एफ के माध्यम से बैंकिंग प्रणाली में बहुत अधिक चलनिधि इंजेक्शन। 2011-12 में केंद्र को निवल आर बी आई ऋण तथा आरक्षित मुद्रा में निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों, दोनों में ही वृद्धि हुई थी; निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों के अंश में वृद्धि मुख्य रूप से रुपया मूल्यहास के कारण मुद्रा पुनर्मूल्यन की वजह से हुई थी।

5.15 जहाँ तक सरकार को बैंक ऋण के अंश तथा बैंकिंग प्रणाली की विदेशी मुद्रा आस्तियों का संबंध है, व्यापक मुद्रा स्रोतों में भी इसी प्रकार की प्रवृत्ति दिखाई दी (चार्ट V.3)। हालांकि वाणिज्य क्षेत्र को बैंक ऋण, 2003-04 के पश्चात् उनके अंशों में महत्वपूर्ण वृद्धि के साथ सम्पूर्ण अवधि में व्यापक मुद्रा के प्रमुख घटक बने रहे।

मांग दर, जी डी पी संवृद्धि तथा मुद्रास्फीति में प्रवृत्तियां

5.16 सुधार के पश्चात्, ब्याज दरों के संबंध में बाजार के निर्णय के साथ, मांग दर सामान्यतया चलनिधि और मुद्रास्फीति स्थितियों

चार्ट V.2: आरक्षित मुद्रा के स्रोत

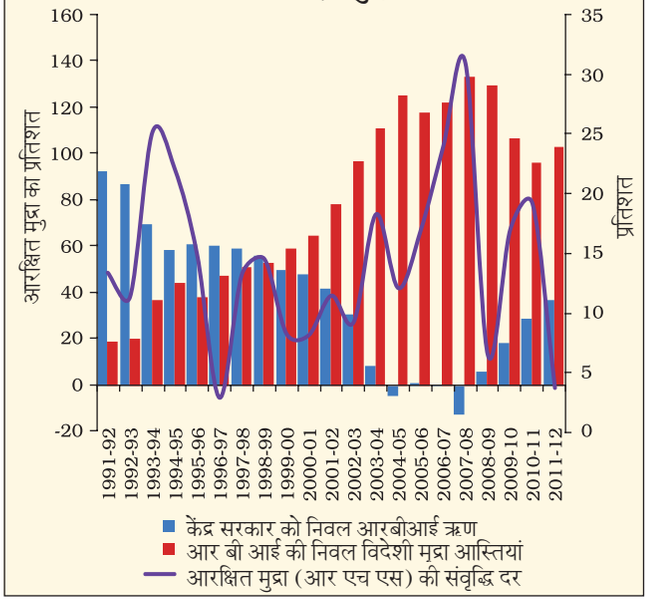

चार्ट V.3: व्यापक मुद्रा के स्रोत

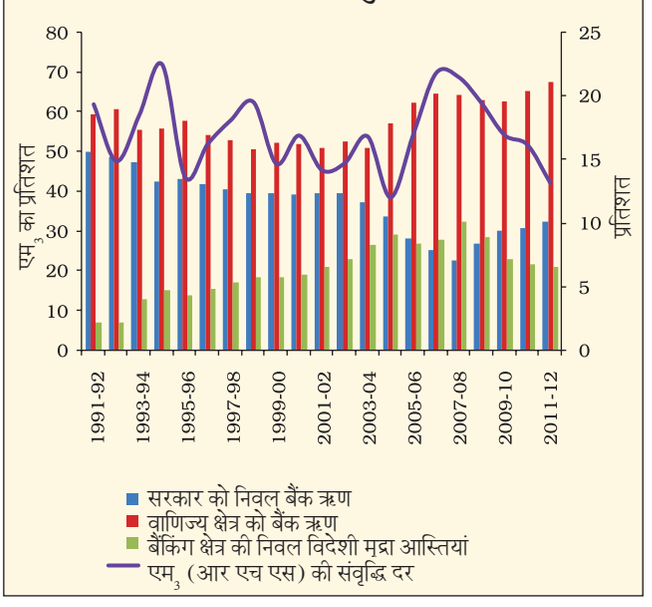

की अनुक्रिया में मौद्रिक नीति दर के अनुरूप चली है (चार्ट V.4)। 2000 में एल ए एफ के संस्थापन के पश्चात्, मांग दर की अस्थिरता में महत्वपूर्ण कमी हुई। मध्य-1990 के दशक के बाद मुद्रास्फीति दर में महत्वपूर्ण कमी हुई, यद्यपि, वर्ष के दौरान आपूर्ति और मांग की तरफ पर विभिन्न तत्वों के मिश्रण को प्रतिबिंबित करते हुए, 2010-11 के पश्चात् तीव्र वृद्धि हुई थी। 1991-92 में ढांचागत सुधारों के लिए की गई पहल के परिणामस्वरूप वास्तविक जी डी पी संवृद्धि दर में सुधार हुआ, किन्तु 1990 के दशक के अंतिम वर्षों के दौरान उसमें शिथिलता आ गई थी, जिसका मुख्य कारण औद्योगिक सुधार प्रक्रिया में गतिशीलता का अभाव था। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण, सामान्य मुद्रास्फीति, काफी अधिक पूंजी का आगमन और बचत तथा निवेश की उच्च दर के समर्थन से 2003-04 के बाद संवृद्धि दर में फिर और काफी अधिक सुधार हुआ। संवृद्धि दर, 2008-09 में वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप कम हो गई किन्तु बाद के दो वर्षों में समन्वित राजकोषीय नीति कार्रवाइयों द्वारा समर्थन प्राप्त होने से उसमें तुरंत सुधार हो गया। 2011-12 के दौरान वैश्विक आर्थिक स्थितियों के बिगड़ने तथा ढांचागत बाधाओं के बने रहने के कारण संवृद्धि प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा ।

5.17 1990 के दशक के प्रारंभ में ढांचागत सुधारों की पहल करने के बाद से राजकोषीय-मौद्रिक पारस्परिक क्रिया में व्यापक प्रवृत्तियों की समीक्षा करते हुए, इस प्रकार की पारस्परिक क्रियाओं में

चार्ट V. 4: संवृद्धि दर, मुद्रास्फीति दर और मांग दर

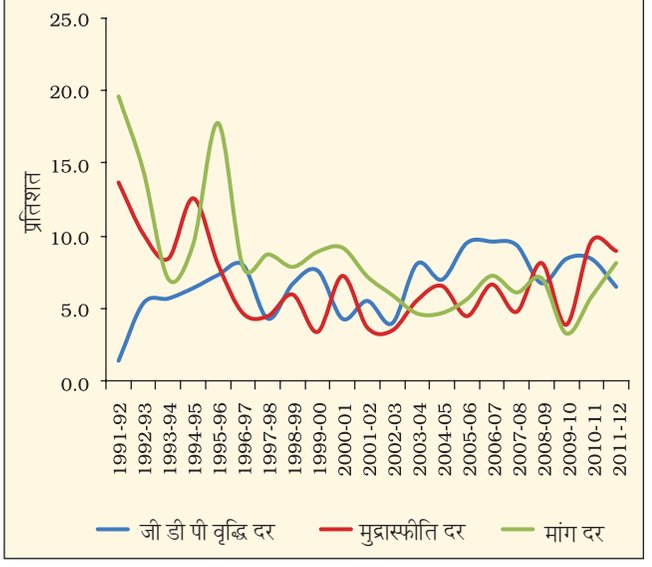

अंतर्निहित सैद्धांतिक व्याख्या और इस विषय पर कुछ अनुभवजन्य साहित्य पर भी आगे संक्षेप में चर्चा की गई है।

राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया के माध्यम-सैद्धांतिक और अनुभवजन्य मुद्दों की सारग्राही समीक्षा

5.18 राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही नीतियां समष्टि आर्थिक स्थिरीकरण के उपकरण हैं। संवृद्धि, कीमत स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयासों में न्यायोचित ढंग से सामंजस्य स्थापित करने के लिए इन दो नीतियों के बीच समन्वय आवश्यक है। उक्त स्थितियां राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा इन उद्देश्यों को सौंपे गये विभेदक भार द्वारा तथा विकासशील समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थितियों के बारे में अनिश्चितता द्वारा प्रायः जटिल हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, संवृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए एक (अतिरिक्त) स्फीतिकारी राजकोषीय नीति के माध्यम से लाई गई कुल मांग में वृद्धि मौद्रिक प्राधिकारियों की सुविधानुसार मुद्रास्फीति दर में परिवर्तन कर सकती है। उसी प्रकार, एक कठोर मौद्रिक नीति उच्चतर बाजार ब्याज दरों में परिवर्तित हो सकती है तथा ब्याज भुगतानों के व्यय एवं बजट घाटे में वृद्धि हो सकती है।

5.19 इन दो नीतियों के बीच की पारस्परिक क्रिया का विश्लेषण बजट घाटे के वित्तपोषण पक्ष से भी किया जा सकता है, अर्थात्, मोटे तौर पर बांडों और मुद्रा के अनुसार। बजट घाटों का बांड वित्तपोषण ब्याज दरों पर सामान्य दबाव डाल सकता है जिससे निजी क्षेत्र के निवेशों का बहिर्गमन बढ़ सकता है और एक बिन्दु से परे, संवृद्धि संभावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। निजी निवेश के बहिर्गमन का प्रभाव निजी संस्थाओं की ओर से गैर-रिकार्डियन व्यवहार के मामले में ही पड़ता है, अर्थात् वे यह महसूस नहीं करते हैं कि, उदाहरण के लिए, आज के बजट घाटे की वृद्धि में भविष्य के कर भार की वृद्धि अंतर्निहित है और तदनुसार चूंकि सार्वजनिक बचत में गिरावट आ जाती है, उनकी बचत में उस सीमा तक वृद्धि नहीं होती है। फ्लिप साइड पर, इस सीमा तक कि (बड़े) बजट घाटों का वित्तपोषण (गैर आनुपातिक रूप से) मुद्रा निर्माण के माध्यम से किया जाता है, ये यदि समझौता नहीं करते हैं तो अवश्यंभावी रूप से कीमत स्थिरता के घोषित मौद्रिक नीति उद्देश्यों में हस्तक्षेप करते हैं।

5.20 उसी समय, चूंकि हाल के वैश्विक संकट के साथ भारतीय अनुभव ने बजट घाटे में काफी अधिक वृद्धि दर्शायी है, राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों द्वारा उत्पन्न घाटे को एक निभावशील मौद्रिक नीति रुख द्वारा समर्थन प्रदान किया गया था ताकि प्रारंभ में मुद्रास्फीति

दर के कम रहने के बावजूद वित्तीय बाजार अस्थिरता को रोका जा सके तथा अधिक सामान्य रूप से सुधार प्रक्रिया को जारी रखा जा सके। एक अन्य माध्यम जिससे राजकोषीय घाटे मौद्रिक नीति का अतिक्रमण कर सकते हैं, वह उनके चालू खाता घाटे पर प्रभाव के माध्यम से है (उच्चतर आयातों के माध्यम से) और देश जोखिम प्रीमियम तथा क्रमशः विदेशी मुद्रा विनिमय दर पर प्रभाव है (मोहन्ती और स्कैटिग्ना, 2003) ।

5.21 एक सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य से, सार्जेंट और वालेस के ''अन्प्लेजेंट मोनेटरिस्ट अर्थमेटिक'' (1981) ने दर्शाया है कि जब कभी अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर से ब्याज की वास्तविक दर अधिक हो जाती है तो अल्पावधि में (कीमत स्थिरता बनाये रखने के दृष्टिकोण से) मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा बजट घाटे के मौद्रिक वित्तपोषण में कटौती का कोई प्रयास अन्ततः भविष्य में अधिक मौद्रिक वित्तपोषण और उच्चतर मुद्रास्फीति परिणाम के रूप में सामने आएगा। ऐसा इसलिए कि अल्पावधि में मौद्रिक वित्तपोषण में कटौती से निहितार्थ में अधिक बांड वित्तपोषण होगा जो ब्याज दरें बढ़ाएगा। इससे क्रमशः उच्चतर ब्याज भुगतान करने पड़ेंगे और इस प्रकार कुछ समय के बाद भारी बजट घाटा होगा। क्रमशः उच्चतर क्रम में बांड देयताओं की चुकौती संबंधी सरकार की योग्यता की महसूस की गई सीमाओं को देखते हुए मौद्रिक वित्तपोषण अवश्यंभावी तथा अंततः बड़ा होगा, जिसके परिणाम मुद्रास्फीतिकारी होंगे।

5.22 दूसरी तरफ, भले ही केंद्रीय बैंक घाटे के मौद्रिक वित्तपोषण के लिए मौन स्वीकृति न देता हो, कीमत स्तर के राजकोषीय सिद्धांत (एफ टी पी एल) का यह तर्क है कि मुद्रास्फीति नियंत्रण पर फिर भी समझौता किया जा सकता है (उदाहरण के लिए, कॉक्रेन, 1999, वुडफोर्ड, 1995) । यह इसलिए कि एफ टी पी एल के अनुसार सरकार का अंतर-कालिक बजट दबाव एक संतुलन स्थिति है और मूल्य स्तर एकमात्र परिवर्ती है जो बहिर्जात रूप से दिये गये प्राथमिक अधिशेषों के वर्तमान मूल्य के साथ बांडों के वर्तमान स्टॉक के नाममात्र मूल्य को समीकृत करने के लिए समायोजन कर सकता है। इस प्रकार, वह राजकोषीय नीति है जो मूल्य स्तर का निर्धारण करती है। एफ टी पी एल की, यद्यपि सैद्धांतिक आधार पर आलोचना की गई है और अनुभवजन्य समर्थन भी मिश्रित हो गया है (जॉली, 2005)।

5.23 एक अनुभवजन्य दृष्टिकोण से अनेक अध्ययनों द्वारा वी ए आर ढांचे में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच पारस्परिक क्रिया का विश्लेषण किया गया है। उदाहरण के लिए मस्कैटली और अन्य (2002) ने दर्शाया है कि चयनित ओ ई सी डी देशों के एक सेट में एक राजकोषीय नीति आघात के प्रति मौद्रिक नीति की अनुक्रिया एक समान नहीं थीः जहाँ यू के और यू एस में इस प्रकार के आघात से पहली ही तिमाही में ब्याज दर में महत्वपूर्ण कमी हो गई थी (निभावशील मौद्रिक नीति दर्शाते हुए), वहीं जर्मनी और फ्रांस में कोई स्पष्ट मौद्रिक प्रतिक्रिया नहीं हुई थी। राज और अन्य (2011) ने 2000 से 2010 तक की अवधि के तिमाही आंकड़ों का इस्तेमाल करते हुए भारत में राजकोषीय-मौद्रिक पारस्परिक क्रिया का निर्धारण किया और अन्य बातों के साथ-साथ यह पाया कि जब कि मौद्रिक नीति ने उत्पादन और मुद्रास्फीति आघातों के प्रति प्रतिचक्रीय विधि से प्रतिक्रिया की, राजकोषीय नीति की प्रतिक्रिया प्राथमिक रूप से प्रचक्रीय थी। उत्पादन पर स्फीतिकारी राजकोषीय नीति का सकारात्मक प्रभाव अस्थायी पाया गया, जो मध्यावधि से दीर्घावधि में महत्वपूर्णता से नकारात्मक प्रभाव में परिवर्तित हो गया। एक राजकोषीय नीति आघात (अर्थात् राजकोषीय घाटे में वृद्धि) ने मौद्रिक नीति रुख को कठोर बनाने की ओर प्रेरित किया, जो तीन तिमाहियों के बाद ऊँचाई पर पहुँच गया और सात तिमाहियों के बाद संतुलन पर लौट आया। एक मौद्रिक नीति आघात (अर्थात् मांग दर में वृद्धि) ने प्रारंभ में, उसी प्रकार राजकोषीय घाटे में वृद्धि की ओर प्रेरित किया, जिसका प्रभाव चौथी तिमाही के बाद क्रमशः समाप्त हो गया।

5.24 मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य राजकोषीय मौद्रिक पारस्परिक क्रिया के अनुभवजन्य निर्धारण की ओर अधिक परंपरागत दृष्टिकोण है। जैसा कि पहले संकेत किया गया है, जॉली (2005) ने सात उभरते हुए बाजार देशों के एक सेट के लिए अनुभव के आधार पर यह पता लगाया कि क्या राजकोषीय रुख सदैव मौद्रिक नीति निर्णयों को प्रभावित करता है अथवा, अधिक तकनीकी रूप से, क्या राजकोषीय परिवर्ती केंद्रीय बैंक के प्रतिक्रिया कार्य में महत्वपूर्णता के साथ प्रवेश करते हैं। एक आनुक्रमिक-प्रकार में (टेलर, 1993) आश्रित परिवर्ती के रूप में केंद्रीय बैंक की नीति दर के साथ-मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य और स्वतंत्र परिवर्तियों के रूप में उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति दर-एक अतिरिक्त परिवर्ती, अर्थात् राजकोषीय रुख के एक माप के रूप में वास्तविक प्राथमिक संतुलन को शामिल किया गया था। इस समावेशन के पीछे तर्काधार औद्योगीकृत देशों के लिए मेलिज़ (1997, 2002) और वाइपोल्ज़ (1999) द्वारा किये गये पिछले अनुभवजन्य कार्य पर आधारित था।

5.25 हालांकि, जॉली (2005) ने पाया कि सभी सात देशों की मौद्रिक नीति ने प्राथमिक संतुलनों में परिवर्तनों के प्रति अनुक्रिया नहीं की अथवा, अन्य शब्दों में, राजकोषीय नीति ने मौद्रिक नीति का अतिक्रमण नहीं किया था। ऐसन और हानर (2008) ने 1970 से

2006 की अवधि में 60 उन्नत और उभरते हुए बाजार देशों के एक सेट के अपने अध्ययन में पाया कि एक जी एम एम ढांचे में, बजट घाटों का झुकाव ब्याज दरों पर सकारात्मक एवं सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण प्रभाव की तरफ होता है। हालांकि उक्त प्रभाव इस शर्त पर था कि क्या बजट घाटे उच्च थे, उनका निधीयन किस प्रकार किया गया था (अधिकांशतः देशी आधार पर वित्तपोषण किया गया था अथवा क्या उसकी उच्च देशी कर्ज के साथ पारस्परिक क्रिया हुई थी) और क्या वित्तीय खुलापन कम था, ब्याज दरें उदारीकृत की गई थी और क्या वित्तीय गहराई कम थी। सार रूप में, उक्त प्रयोग से ब्याज दरों पर बजट घाटे का गैर-आनुक्रमिक प्रभाव सामने लाया गया था। हाल ही में, टिलमैन (2011) ने पाया कि 1982 से 2004 की अवधि में यू एस आंकड़ों ने गैर-आनुक्रमिक टेलर नियम का समर्थन किया। इस प्रकार की गैर-आनुक्रमिकता फिलिप्स वक्र की गैर-आनुक्रमिकता अथवा गैर द्विघाती केंद्रीय बैंक प्राथमिकताओं से नहीं उठी है बल्कि फिलिप्स वक्र के ढाल (आनुक्रमिक) के बारे में अनिश्चितता के मौद्रिक नीति दृष्टिकोण से उत्पन्न हुई है। व्यवहार में, ''बहुत खराब'' परिणामों को टालने के दृष्टिकोण से, मुद्रास्फीति के प्रति मौद्रिक नीति अनुक्रिया मुद्रास्फीति दर से उच्चतर सुदृढ़ और उत्पादन अंतराल से बड़ी होकर मज़बूत हो जाती है।

भारत में मौद्रिक नीति रुख पर राजकोषीय नीति का प्रभाव-एक अनुभवजन्य निर्धारण

5.26 इस पृष्ठभूमि में, भारत में सुधारों की अवधि में, भारत में मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति के प्रभाव का निर्धारण जॉली (2005) के दृष्टिकोण का इस्तेमाल करते हुए निर्धारित किया गया है, जो निम्नानुसार प्राक्कलन करता हैः

$$\text{आईएनटी}_{t} = \alpha + \beta\ \text{आईएनटी}_{t-1} + \gamma\text{आइएनएफएल}_{t-1} + \delta\ \text{आउटपुट गैप}_{t-1} + \theta\ \Delta\text{आरपीबी}_{t-1} + \varepsilon_{t}$$

जहाँ आइ एन टी मौद्रिक नीति हस्तक्षेप दर है, आई एन एफ एल वार्षिक मुद्रास्फिति दर है, आउटपुट गैप वास्तविक उत्पादन और संभावित उत्पादन के बीच का अंतर है, Δआर पी बी वास्तविक प्राथमिक संतुलन में परिवर्तन है और ε एरर टर्म है। मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण देशों के लिए समीकरण में ''आइ एन एफ एल'' टर्म के स्थान पर ''मुद्रास्फीति लक्ष्य को छोड़ कर अपेक्षित मुद्रास्फीति'' टर्म को रखा गया था। वास्तविक प्राथमिक संतुलनों को अंतर के रूप में उपर्युक्त समीकरण में शामिल कर लिया गया था, क्योंकि नमूने में उक्त श्रृंखला सभी देशों में अस्थिर पायी गई थी। जॉली ने यह स्वीकार किया है कि यद्यपि मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य का इस प्रकार का विनिर्देशन सैद्धांतिक व्याख्या से प्राप्त नहीं किया गया था, इसके द्वारा मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति के प्रत्यक्ष प्रभाव का निर्धारण किया जा सका था जो कुल मांग दबाव (उत्पादन अंतराल) तथा मुद्रास्फीति के द्वारा अप्रत्यक्ष प्रभाव को आगे बढ़ाता हे।

5.27 1988-89 से 2011-12 की अवधि के लिए वार्षिक आंकड़ों का इस्तेमाल करते हुए कुछ आशोधनों के साथ भारत के लिए उपर्युक्त दृष्टिकोण अपनाया गया था। यद्यपि व्यापक आधार वाले ढांचागत सुधार 1991-92 में प्रारंभ हो गये थे, मुद्रा बाजार सुधार, 1988 में भारतीय मितीकाटा और वित्त गृह (डी एफ एच आई) की स्थापना के साथ ही कुछ पहले शुरू हो गये थे, उसके बाद 1989 में मांग मुद्रा दरों का अविनियमन हो गया। इस अवधि के अंतर्गत मोटे तौर पर दो मौद्रिक नीति ढांचे भी शामिल हैंः मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण, जो 1985-86 में प्रारंभ हुआ और 1998-99 से प्रारंभ बहुविध संकेतक दृष्टिकोण। भारित औसत मांग दर (कॉल रेट) को, जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है, मौद्रिक नीति दर के लिए परोक्षी के रूप में लिया गया था। जून 2000 में संपूर्ण एल ए एफ के प्रारंभ होने के बाद से भारित औसत मांग दर आम तौर पर प्रभावी नीति दर के आस-पास मंडराती रही है, अर्थात् बेंकिंग प्रणाली चलनिधि घाटा के मामले में रेपो दर तथा बैंकिंग प्रणाली चलनिधि अधिशेष के मामले में रिवर्स रेपो दर। इस सीमा तक कि बैंकिंग प्रणाली चलनिधि परिवर्तन सी आर आर जैसे प्रत्यक्ष उपकरण के माध्यम से अथवा ओ एम ओ, एल ए एफ और एम एस एस जैसे अप्रत्यक्ष उपकरणों के माध्यम से मौद्रिक नीति कार्रवाइयों में भी प्रतिबिंबित हुए हैं, उक्त संपूर्ण अवधि में समग्र मौद्रिक नीति को प्रतिबिंबित करने के लिए मांग दर की उचित रूप से अपेक्षा की जा सकती है। (सिंह 2010) ।

5.28 समीकरण में उत्पादन अंतराल परिवर्ती को एच पी फिल्टर का इस्तेमाल करते हुए प्रवृत्ति से अलग (डी-ट्रेंडेड) अथवा जी डी पी के वास्तविक लॉग के चक्रीय घटक के रूप में लिया गया था। उक्त समीकरण में, गैर-मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण वाले देशों के लिए जॉली द्वारा यथा प्रस्तावित मात्र मुद्रास्फीति दर के बजाय एक ''मुद्रास्फीति अंतराल'' परिवर्ती को भी शामिल किया गया था। यद्यपि भारत एक मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण वाला देश नहीं है, मौद्रिक नीति का मुख्य उद्देश्य कीमत स्थिरता (संवृद्धि के साथ) रहा है और रिज़र्व बैंक इस प्रकार की नीति के मार्ग-दर्शक के रूप में मुद्रास्फीति और संवृद्धि के निर्देशात्मक पूर्वानुमान उपलब्ध कराता है; वर्ष के प्रारंभ में (आम तौर पर अप्रैल में) निर्धारित इन निर्देशात्मक पूर्वानुमानों का विकसित होती हुई गतिविधियों के प्रकाश में आवधिक

आधार पर पुनर्निर्धारण किया जाता है। इसके अलावा विकसित होती समष्टि आर्थिक स्थिति पर निर्भर करते हुए कीमत स्थिरता और संवृद्धि उद्देश्य के बीच जोर वर्ष-दर-वर्ष अलग-अलग होता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए मुद्रास्फीति अंतराल को उसकी (एच पी-फिल्टर-आधारित) प्रवृत्ति दर से वर्ष-दर-वर्ष थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर के विचलन के रूप में परिभाषित किया गया था और उसे समीकरण में शामिल किया गया था।

5.29 विशिष्ट टेलर-नियम विनिर्देशों के अनुरूप, समसामयिक उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल समीकरण में शामिल किये गये थे। वास्तविक प्राथमिक संतुलन के स्थान पर जी डी पी में केंद्र के सकल राजकोषीय घाटे का अनुपात (जी एफ डी आर) रखा गया था। (एक अवधि विलंबित), ऐसा केवल मांग दर पर समग्र निवल उधार आवश्यकताओं के प्रभाव का अनुभव प्राप्त करने के लिए नहीं किया गया था बल्कि इसलिए भी कि भारत में बजट में वार्षिक लक्ष्य और एफ आर बी एम वितरण राजकोषीय घाटा जी डी पी अनुपात के अनुसार विर्निर्दिष्ट किये जाते हैं (राजस्व घाटे/प्रभावी राजस्व घाटे से अलग)। यद्यपि यह विनिर्देश एक विशिष्ट नीति प्रतिक्रिया कार्य नहीं है, जैसा कि अनेक उन्नत देशों में प्रचलित है, उसका उद्देश्य मौद्रिक नीति निर्माण के बहुविध संकेतक दृष्टिकोण[1] के कुछ गति-सिद्धांतों का अभिग्रहण करना है, जिसे भारत में 1990 के दशक के आखीर में अपनाया गया था।

5.30 जैसा कि ए डी एफ और के पी एस एस परीक्षणों द्वारा परिपुष्ट हुआ है, सभी परिवर्तियों का स्थिर होना पाया गया था। ग्रेंजर कारणता एफ परीक्षणों ने दर्शाया है कि 1988-89 से 2011-12 की अवधि में जी डी पी अनुपात में राजकोषीय घाटे ने एक ही दिशा में मांग दर में परिवर्तन किया (एक लैग पर, शेवार्ज सूचना मानदंड के आधार पर लैग लेंग्थ तय की जा रही है) (सारणी 5.1)। इसने यह दर्शाया है कि राजकोषीय घाटा-जी डी पी अनुपात के विगत मूल्यों का झुकाव मांग दर को प्रभावित करने के प्रति रहा है। (अथवा मौद्रिक नीति दर को प्रभावित करने के प्रति रहा है)।

सारणी 5.1: ग्रेंजर कारणता जांच

अकृत प्राक्कल्पना	एफ-आंकड़ा	प्रॉब
जी एफ डी आर मांग दर के लिए ग्रेंजर कारणता नहीं है।	3.90	0.06
मांग दर जी एफ डी आर के लिए ग्रेंजर कारणता नहीं है	0.57	0.46

5.31 आगे, मांग दर को अपने लैग, उत्पादन अंतराल, मुद्रास्फीति अंतराल और विलंबित जी एफ डी-जी डी पी अनुपात पर पीछे हटा दिया गया था। वर्ष-विशेष बहिर्वासियों का संज्ञान लेने के लिए दो नकली (डमी) परिवर्तियों को शामिल किया गया था; डमी 1 ने वर्ष 1995-96 के लिए अस्थिरता का डटकर सामना करने के लिए विदेशी मुद्रा बाजार में आर बी आई के परिचालनों के परिणाम के रूप में अस्थायी रूप से दबावग्रस्त देशी चलनिधि स्थितियों के पश्चात् मांग दर में तीव्र वृद्धि को हिसाब में लिया; और डमी 2 ने वर्ष 1996-97 (जिसने पिछले वर्ष के विदेशी मुद्रा बाजार परिचालनों के आधारभूत प्रभाव को प्रतिबिंबित किया) और 2008-09 से 2011-12 (अधिकांशतः जो वैश्विक वित्तीय संकट के अतिरिक्त राष्ट्रिक कर्ज संकट के प्रति नीति अनुक्रिया से उत्पन्न था) के दौरान देशी चलनिधि स्थितियों की काफी अधिक सुलभता का अभिग्रहण किया। अनुमान के परिणाम नीचे दिये गये हैं :

मांग दर = 0.58+0.50 मांग दर (-1) + 0.88 मुद्रास्फीति अंतराल + 0.72 उत्पादन अंतराल
(0.79) (0.00) (0.00) (0.03)

+ 0.72 जीएफडीआर (-1) + 7.89 डमी1 - 2.37 डमी 2
(0.07) (0.00) (0.06)

ए डी जे आर- स्क्वायर: 0.75
प्रॉब (एफ-आंकड़ा): 0.00
एलएम-स्टेट: 0.96

टिप्पणी: लघु कोष्ठक में दिये गये आंकड़े पी - मूल्य हैं।

5.32 एडजस्टेड आर-स्कवायर मूल्य मॉडल की अच्छी व्याख्यात्मक शक्ति दर्शाता है, विशेष रूप से उभरते बाजार के संदर्भ में । स्वतंत्र परिवर्तियों के सभी गुणांक, अर्थात्, विलंबित मांग दर, मुद्रास्फीति अंतराल, उत्पादन अंतराल और राजकोषीय घाटा-जी डी पी अनुपात अलग-अलग रूप से, के अतिरिक्त संयुक्त रूप से भी सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण पाये गये थे तथा उनमें अपेक्षित संकेत थे। सांख्यिकीय जांच (कुसुम और कुसुम स्क्वायर्स) ने, जैसा कि चार्ट V.5 में दर्शाया गया है, अनुमानित समीकरण में पैरामीटरों की स्थिरता की पुष्टि की है।

5.33 अनुमानित समीकरण में, उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल, दोनों के समसामयिक गुणांक सकारात्मक थे और उत्पादन अंतराल की तुलना में मुद्रास्फीति अंतराल का महत्व अधिक था जो इस बात का द्योतक है कि मुद्रास्फीति परिणामों के प्रति मौद्रिक नीति की संवेदनशीलता काफी अधिक है। अनुमानित गुणांक भी इस बात की ओर संकेत करता है कि जी एफ डी-जी डी

1 बहुविध संकेतक दृष्टिकोण के एक भाग के रूप में मात्रा परिवर्तियों जैसे मुद्रा, ऋण, उत्पादन, व्यापार, पूंजी प्रवाह तथा राजकोषीय स्थिति के एक समूह से सूचना सार के अतिरिक्त दर परिवर्तियों जैसे विभिन्न बाजारों में प्रतिफल की दरें, मुद्रास्फीति दर और विनिमय दर का मौद्रिक नीति परिप्रेक्ष्य निकालने के लिए विश्लेषण किया जाता है।

चार्ट V. 5: पैरामीटर स्थिरता जांच

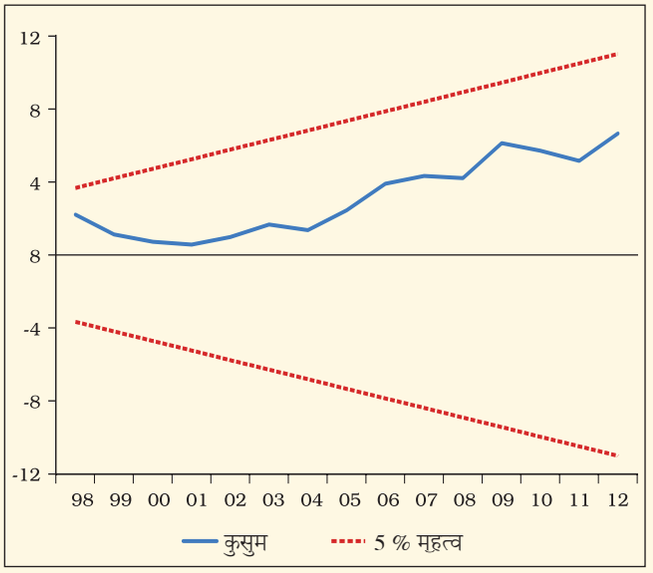

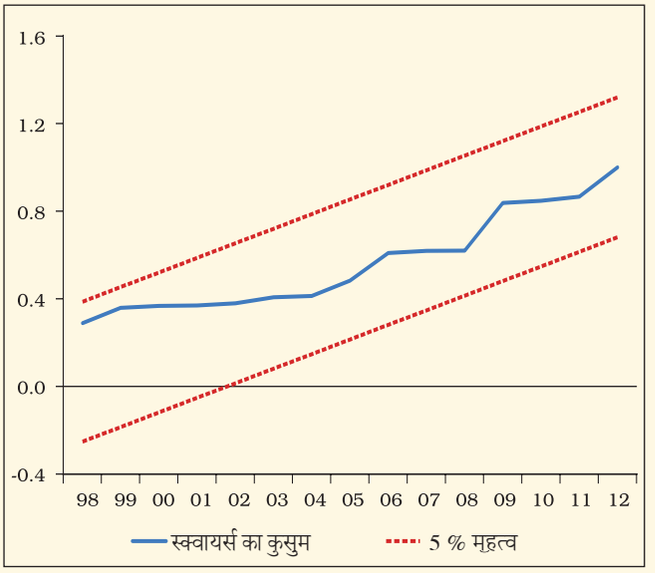

पी अनुपात में औसतन एक प्रतिशत अंक की वृद्धि से मांग दर में एक अवधि विलंब के साथ 0.72 प्रतिशत अंक की प्रत्यक्ष वृद्धि हो जाती है जो मांग दर पर राजकोषीय घाटे में वृद्धि के अप्रत्यक्ष प्रभाव के अतिरिक्त होता है, जिसे मुद्रास्फीति दर और उत्पादन अंतराल के माध्यम से महसूस किया जा सकता है। मांग दर और जी एफ डी-जी डी पी अनुपात के बीच सकारात्मक संबंध अपेक्षित रेखाओं के समानांतर है चूंकि एक उच्चतर राजकोषीय घाटा उधारयोग्य संसाधनों के स्तर पर दबाव डालेगा, जिससे क्रमशः मुद्रा बाजार चलनिधि प्रभावित होगी। इस संदर्भ में, इस बात पर ध्यान आकर्षित किया जा सकता है कि चूंकि बजट व्यय में पूंजी व्यय का अंश विगत वर्षों में आम तौर पर कम हुआ है, संभाव्य उत्पादन संवृद्धि दर पर राजकोषीय घाटे का प्रभाव उत्पादन अंतराल को विस्तार देते हुए कुछ-कुछ मंदित हो गया हो सकता है। डमी 2 का नकारात्मक गुणांक वैश्विक वित्तीय के अतिरिक्त राष्ट्रिक कर्ज संकट के परिणामस्वरूप आम तौर पर रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि बढ़ाने के उपायों के महत्व को रेखांकित करता है।

5.34 परिणामों (अर्थात् मुद्रास्फीति अंतराल और उत्पादन अंतराल के गुणांकों का आकार) को इस तथ्य के प्रकाश में देखे जाने की आवश्यकता है कि उक्त विनिर्देश विशिष्ट मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया कार्य नहीं है क्योंकि उसमें राजकोषीय परिवर्ती को शामिल करने के द्वारा वृद्धि की जाती है। इसके अलावा, चूंकि समीकरण का अनुमान समान्य लीस्ट स्क्वायर्स का इस्तेमाल करते हुए लगाया जाता है, उसे साहित्य में प्रयुक्त की जा रही अधिक उन्नत अनुमान तकनीकों के प्रकाश में एक अनुमान के रूप में देखा जा सकता है। इन मुद्दों के होते हुए भी, मौद्रिक नीति के परिप्रेक्ष्य से यह प्रयोग सुझाव देता है कि भारत जैसी अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति के संचालन के लिए उक्त राजकोषीय संदर्भ महत्व रखता है।

III. कर्ज और नकदी प्रबंध से संबंधित संस्थागत व्यवस्था-क्वो वैडिस

5.35 भारतीय रिज़र्व बैंक संविधि (रिज़र्व बैंक अधिनियम) द्वारा केंद्र सरकार का कर्ज और नकदी प्रबंधक है। रिज़र्व बैंक उसी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार आपसी सहमति द्वारा राज्य सरकारों के कर्ज और नकदी का भी प्रबंध करता है। मौद्रिक और कर्ज प्रबंध को अलग करने संबंधी मुद्दे पर तथा और अधिक विनिर्दिष्ट रूप से कर्ज प्रबंध कार्य को रिज़र्व बैंक से बाहर करने के संबंध में आधिकारिक मंचो पर कम से कम मध्य 1990 के दशक से दोनों ओर से प्रभावशाली तर्क-वितर्क किये जा रहे है। (बॉक्स V.I)। हाल के वैश्विक वित्तीय संकट ने इस वाद-विवाद पर पुनर्विचार करने की ओर प्रेरित किया।

वैश्विक संकट पूर्व का दर्शनशास्त्र

5.36 सार्वजनिक क्षेत्र के कर्ज प्रबंध को एक अलग समष्टि आर्थिक नीति के रूप में उसके अपने उद्देश्यों तथा उपकरणों के साथ लिया जाना तथा मौद्रिक और राजकोषीय नीति के एक विस्तार के रूप में ही नहीं समझा जाना आम तौर पर 1980 के दशक में प्रारंभ

बॉक्स V.I

भारत में कर्ज और मौद्रिक प्रबंध के पृथक्करण के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं संबंधी दृष्टिकोण विकसित करना

संस्थागत, समष्टि आर्थिक और वित्तीय गतिविधियों के साथ आगे-पीछे के क्रम में विगत वर्षों में कर्ज और मौद्रिक प्रबंध के पृथक्करण के मुद्दे पर नीति रुख विकसित हुआ है। विशेष रूप से, 1991-92 में व्यापक संरचनात्मक सुधार का आगमन, राजकोषीय सुदृढ़ीकरण और सरकारी प्रतिभूतियों के लिए एक नियंत्रित से बाजारोन्मुख कीमत खोज तंत्र में परिवर्तन ऐसे महत्वपूर्ण उपक्रमण थे जिन्होंने मौद्रिक और कर्ज प्रबंध की पारस्परिक क्रिया को प्रभावित किया।

पूंजीगत लेखा परिवर्तनीयता संबंधी समिति, 1996 (अध्यक्षः श्री एस. एस. तारापोर) संभवतः भारत में स्थापित पहली ऐसी समिति थी, जिसने भारत में पश्च-सुधार अवधि में मौद्रिक और कर्ज प्रबंध के पृथक्करण एवं सरकार द्वारा लोक ऋण कार्यालय की स्थापना किये जाने की विशिष्ट रूप से सिफारिश की ।

मार्च 1997 में, तदर्थ खजाना बिलों के निर्गम के माध्यम से केंद्र सरकार द्वारा बजट घाटे के स्वतः मुद्रीकरण की व्यवस्था समाप्त कर दी गई थी तथा उसके स्थान पर अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली अपनाई गई। इसने मौद्रिक नीति को एक बृहत् शीर्षांतर (हेड रूम) प्रदान किया।

आर बी आई के एक आंतरिक कार्य दल ने भी दिसंबर 1997 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में सुझाव दिया कि उक्त दो कार्यों को अलग कर दिया जाए एवं कंपनी अधिनियम के अंतर्गत आर बी आई के संपूर्ण स्वामित्व के अधीन एक सहायक संस्था के रूप में एक स्वतंत्र निगम द्वारा कर्ज प्रबंध का अधिग्रहण किया जाना चाहिए।

जून 2000 में आर बी आई द्वारा प्रारंभ की गई एक संपूर्ण चलनिधि समायोजन सुविधा मौद्रिक नीति के एक प्रमुख परिचालन उपकरण के रूप में उभरी है। इसने मौद्रिक नीति के संचालन में एक बृहत् लचीलापन प्रदान किया है।

भारतीय रिज़र्व बैंक की 2000-01 की रिपोर्ट में कहा गया है ''कर्ज प्रबंध और मौद्रिक प्रबंध के कार्यों का पृथक्करण वांछित मध्यावधि उद्देश्य, सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास पर सशर्त, टिकाऊ राजकोषीय सुधार तथा एक समर्थकारी वैधानिक ढांचे के रूप में माना गया है .....रिज़र्व बैंक ने भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 में संशोधन प्रस्तावित किये हैं जिनके अनुसार रिज़र्व बैंक द्वारा लोक ऋण प्रबंध के अधिदेशात्मक प्रकार को हटा दिया जायगा तथा केंद्र सरकार के पास यह विवेकाधीन शक्ति निहित होगी कि वह लोक ऋण का प्रबंध स्वयं संभाले अथवा यदि वह चाहे तो किसी अन्य स्वतंत्र निकाय को सौंप दे।'' (पैराग्राफ ।।.25)।

आर बी आई के वार्षिक नीति वक्तव्य 2001-02 में उल्लेख किया गया है ''.....जब कि कार्यान्वयन के ब्योरे के संबंध में कोई विचार नहीं लिया गया था, दोनों कार्यों को अलग करने संबंधी निर्णय को सिद्धांत रूप में वांछित समझा गया था .....राजकोषीय उत्तरदायित्व बिल के संबंध में एक बार वैधानिक कार्रवाई किये जाने और भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के संबंध में संशोधन पूरे हो जाने के बाद उसकी संभाव्यता तथा सरकारी कर्ज प्रबंध कार्य को आर बी आई से अलग करने के लिए अगले कदम हेतु मामले को सरकार के पास भेजने का प्रस्ताव है,'' (पैराग्राफ 90)।

वित्त मंत्रालय के एक आंतरिक विशेषज्ञ दल, 2001 (अध्यक्षः श्री ए. विरमानी) ने इन दोनों कार्यों को अलग करने के लिए एक द्वि-चरणीय प्रक्रिया की सिफारिश की, अर्थात् एक व्यापक जोखिम प्रबंध ढांचा विकसित करने के लिए वित्त मंत्रालय में केंद्रीकृत मध्यवर्ती कार्यालय की स्थापना किया जाना एवं उसके बाद एक स्वायत्त लोक ऋण कार्यालय की स्थापना किया जाना।

राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम ने जो जुलाई 2004 में लागू हुआ था, केंद्र सरकार के राजकोषीय घाटे और राजस्व घाटे में अधिदेशात्मक और समय-बद्ध कटौती के लिए प्रावधान किया। उसने अप्रैल 2006 से प्रभावी, सरकारी प्रतिभूतियों के लिए प्राथमिक बाजार में रिज़र्व बैंक द्वारा भाग लिये जाने पर रोक लगाने का भी प्रावधान किया था। इसने, 2000 में एल ए एफ के संस्थापन के साथ तथा 1990 के दशक के शुरू में लागू प्राथमिक बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री के लिए नीलामी आधारित तंत्र के साथ मिलकर कर्ज प्रबंध और मौद्रिक प्रबंध के बीच हित-संघर्ष में काफी अधिक कमी की, यद्यपि, ये दोनों आर बी आई की सीमा के अंतर्गत ही रहे।

एफ आर बी एम अधिनियम के संदर्भ में, वर्ष 2005-06 के आर बी आई के वार्षिक नीति वक्तव्य में कर्ज प्रबंध और मौद्रिक परिचालनों के कार्यात्मक अलगाव की ओर बढ़ने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक के भीतर मौद्रिक परिचालनों को सुदृढ़ बनाने के साथ-साथ सरकारी कर्ज प्रबंध परिचालनों का पुनराभिमुखीकरण दर्शाया गया है। इस उद्देश्य की ओर, रिज़र्व बैंक के लिए एक समन्वित बाजार अंतरापृष्ठ उपलब्ध कराने एवं मौद्रिक परिचालनों के बैंक के संचालन में समाकलन को संपादित करने के लिए 6 जुलाई 2005 को आर बी आई में वित्तीय बाजार विभाग (एफ एम डी) का गठन किया गया था। एफ एम डी कार्यात्मक रूप से आर बी आई के आंतरिक ऋण प्रबंध विभाग से अलग है।

संपूर्ण पूंजीगत लेखा परिवर्तनीयता संबंधी समिति, जुलाई 2006 (अध्यक्षः श्री एस. एस. तारापोर) ने अधिक सक्षम कर्ज प्रबंध में समर्थ होने तथा साथ ही मौद्रिक प्रबंध के लिए प्रभावी कार्यात्मक पृथक्करण के लिए आर बी आई से बाहर स्वतंत्र रूप से परिचालन हेतु लोक ऋण कार्यालय की स्थापना की सिफारिश की।

केंद्रीय बजट 2007-08 में घोषणा की गई, ''सम्पूर्ण विश्व में कर्ज प्रबंध मौद्रिक प्रबंध से भिन्न है। सरकार में कर्ज प्रबंध कार्यालय (डी एम ओ) की स्थापना की वकालत काफी समय से की जा रही है। अब तक प्राप्त किये गये राजकोषीय सुदृढ़ीकरण ने हमें पहला कदम उठाने के लिए प्रोत्साहित किया है। तदनुसार, मैं एक स्वायत्त डी एम ओ स्थापित करने का प्रस्ताव रखता हूँ और प्रथम चरण में एक संपूर्ण डी एम ओ में अंतरित करने की सुविधा के लिए एक मध्यवर्ती कार्यालय की स्थापना की जाएगी।'' (बजट भाषण, पैराग्राफ 106)।

बाद में, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार ने 2008 में इस बात का विश्लेषण करने के लिए कि किस प्रकार सर्वोत्तम डी एम ओ की स्थापना की जाए, एक आंतरिक कर्ज प्रबंध संबंधी कार्यदल (अध्यक्षः डॉ. जहॉगीर अज़ीज़) स्थापित किया। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत सर्वोत्तम प्रथाओं को विशिष्टता

(जारी...)

(...समाप्त)

प्रदान करते हुए (अन्य बातों के साथ-साथ, आई एम एफ और विश्व बैंक द्वारा 2003 में सार्वजनिक कर्ज प्रबंध संबंधी दिशा-निर्देशों का उद्धरण देते हुए) कि कर्ज प्रबंध को मौद्रिक नीति से भिन्न होना चाहिए और उसे केंद्रीय बैंक के क्षेत्र से बाहर रखा जाना चाहिए, कार्यदल ने भारत में केंद्र और राज्य सरकारों के कर्ज और नकद प्रबंध के निष्पादन हेतु एक सांविधिक निकाय (राष्ट्रीय राजकोष प्रबंध एजेंसी) की स्थापना किये जाने की सिफारिश की। कार्यदल ने एक अलग कर्ज प्रबंध एजेंसी के लिए निम्नलिखित तर्काधार प्रस्तुत किये :-

- जैसा कि भारत सहित अनेक उभरते बाजार वाले देशों के मामले में है कि कर्ज प्रबंध कार्य अनेक विभागों में बँटे होने के कारण कार्रवाई की रूपरेखा और जवाबदेही धुंधली हो जाती है, अतः इसके बजाय कर्ज प्रबंध कार्यों का समेकन तथा परिणामी सूचनाओं का एक ही एजेंसी में एकीकरण करने से महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त होंगे।
- यदि केंद्रीय बैंक भी सरकारी कर्ज का प्रबंध करता है तो हितों का संघर्ष सामने आ सकता है और उस मामले में वह मुद्रास्फीति दबावों को देखते हुए भी कर्ज की लागत को न्यूनतम करने के लिए ब्याज दरों को अपेक्षाकृत कम करने की ओर प्रेरित हो सकता है। हित-संघर्ष इसलिए भी हो सकता है कि बैंकिंग प्रणाली के एक विनियामक तथा पर्यवेक्षक के रूप में केंद्रीय बैंक को यह प्रोत्साहन प्राप्त है कि वह बैंकों को भारी मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियां धारित करने संबंधी अधिदेश जारी करे।
- हित-संघर्ष उस स्थिति में उठ सकता है, यदि केंद्रीय बैंक, जो सरकारी प्रतिभूति बाजार का स्वामी/नियंत्रक होने के साथ-साथ बाजार में सहभागी भी है।

डॉ. राकेश मोहन, अध्यक्ष, वित्तीय क्षेत्र आकलन समिति ने एक मध्यवर्ती कार्यालय स्थापित करने के प्रस्ताव पर सहमति व्यक्त की, जो यू एस राजकोष में डी एम ओ की भूमिका के सदृश है, किन्तु व्यक्तिगत तौर पर उनके विचार से स्वतंत्र डी एम ओ की स्थापना तथा ऋण प्रबंध को रिज़र्व बैंक से पूरी तरह से अलग करने संबंधी निर्णय के संबंध में अनेक आधारों पर पुनरीक्षण करने की आवश्यकता है, जैसेः

- जैसी कि राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान के अंतर्गत परिकल्पना की गई है, जी डी पी का 6 प्रतिशत संयुक्त (केंद्र और राज्य) राजकोषीय घाटा भी प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में उच्चतम घाटों में गिना जाएगा और 80 प्रतिशत से अधिक के समग्र कर्ज-जी डी पी अनुपात के साथ मिलाने पर भविष्य में राजकोषीय और मौद्रिक प्रबंध के बीच समग्र सामंजस्य बनाए रखना आवश्यक होगा।
- एस एल आर में कटौती संयुक्त राजकोषीय घाटे में आगे और कटौती पर सशर्त होगी और तब तक मौद्रिक प्रबंध, कर्ज प्रबंध और बैंक विनियम का परस्पर जुड़े रहना जारी रहेगा।
- अस्थिर पूंजी प्रवाहों के संदर्भ में, आर बी आई के विदेशी मुद्रा बाजार परिचालनों का उचित रूप से जारी रहना आवश्यक होगा। यदि कर्ज प्रबंध परिचालन आर बी आई से अलग कर दिये जाते हैं तो एम एस एस के माध्यम से इन परिचालनों का सहवर्ती अवरोधीकरण तथा सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम के साथ उनका सामंजस्य स्थापित करना कठिन होगा।
- चूंकि बैंकिंग आस्तियों का 70 प्रतिशत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से संबंधित है, वित्त मंत्रालय में डी एम ओ की स्थापना किया जाना एक कर्ज प्रबंधक के रूप में सरकार की भूमिका और बैंकिंग क्षेत्र के एक बहुत बड़े भाग के स्वामी के रूप में उसकी हैसियत के बीच एक संघर्ष में परिणत हो सकता है।
- यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के साथ सरकारी प्रतिभूति बाजार (जो क्रमशः कर्ज प्रबंध के लिए आवश्यक है) को आगे और गहन बनाने का कार्य प्रारंभ किया जाता है।
- केंद्र ओर राज्य सरकारों के बाजार उधार कार्यक्रमों में सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है। इसके अलावा, एक केंद्र सरकार के प्राधिकारी के लिए यह उपयुक्त नहीं होगा कि वह राज्य सरकार के कर्ज प्रबंध को भी अपने हाथ में ले।
- जहाँ वित्त मंत्रालय में डी एम ओ की स्थापना से समग्र कर्ज प्रबंध नीति (बाह्य और आंतरिक) के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण सुलभ होगा, रिज़र्व बैंक, यू एस राजकोष की ओर से फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूयार्क के कार्यों की तरह ही सरकार के एजेंट के रूप में समस्त बाजार उधार परिचालनों का संचालन जारी रख सकेगा।
- नये सरकारी प्राधिकरणों की स्थापना करना हमेशा कठिन रहा है। सेवा में सरकारी नियमों के कारण इन संस्थाओं में आम तौर पर अधिकारी स्टाफ विभिन्न सरकारी विभागों से प्रतिनियुक्ति पर होता है, जिससे एक उपयुक्त विशेषज्ञता विकसित करना कठिन हो जाता है।
- आर बी आई कर्ज प्रबंध कार्यों को संभालने में सक्षम है, क्योंकि इसके पास बहुत बड़ी संख्या में स्टाफ है और जिसे बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण मुद्रा बाजार परिचालनों तथा कर्ज बाजार परिचालनों का प्रबंध करने के लिए विकसित विशेषज्ञता प्राप्त है। डी एम ओ के स्टाफ के लिए यह आवश्यक होगा कि वह वित्तीय बाजारों से परिचित हो और बाजार खिलाड़ियों के साथ निरंतर पारस्परिक क्रिया भी कर सकता हो। इसके अलावा, अन्य बातों के साथ-साथ निर्गम और व्यापार के लिए तकनीकी बुनियादी संरचना की भी स्थापना करनी होगी, जिसमें टालने योग्य व्यय निहित होगा।

वित्तीय क्षेत्र वैधानिक सुधार आयोग (एफ एस एल आर सी), भारत सरकार द्वारा जिसका गठन मार्च 2011 में भारतीय वित्तीय क्षेत्र की समसामयिक आवश्यकताओं के अनुरूप कानूनी और संस्थागत ढांचे की समीक्षा तथा उसे नया रूप देने के लिए किया गया था। आयोग ने अक्तूबर 2012 के अपने दृष्टिकोण पत्र में उल्लेख किया है कि सार्वजनिक कर्ज प्रबंध के लिए विशेषज्ञ निवेश बैंकिंग योग्यता की आवश्यकता होती है। एफ एस एल आर सी ने अनेक विशेषज्ञ समितियों के इन विचारों का समर्थन किया कि इस कार्य को एक व्यावसायिक कर्ज प्रबंध एजेंसी द्वारा अधिगृहीत किया जाना चाहिए, क्योंकि (i) सरकार की तटीय और अपतटीय देयताओं पर एकीकृत सूचना जो वर्तमान में आर बी आई और वित्त मंत्रालय में बँटी हुई है, से अधिक सक्षम कर्ज प्रबंध हो सकेगा; और (ii) आर बी बाई के उद्देश्यों का संघर्ष है कि उसे सार्वजनिक कर्ज का प्रबंध करने के साथ कीमत स्थिरता को बनाए रखना होता है। एफ एस एल आर सी ने भी प्रस्तावित किया है कि नकदी प्रबंध के कार्य को एकीकृत किया जाए तथा सरकार की आकस्मिक देयताओं के एक व्यापक चित्र को एक नये कर्ज प्रबंध कानून में प्राप्त किया जाए।

हुआ, जिसका मुख्य कारण यह था कि तीन नीतियों के बीच वर्धमान रूप से तालमेल महसूस किया जाने लगा था (टोगो, 2007)। जहाँ विचारधारा में यह परिवर्तन मुद्रास्फीति और राजकोषीय निरंतरता पर विगत दशकों की राजकोषीय सक्रियता के हानिकर प्रभावों द्वारा उत्पन्न हुआ था, इसे वित्तीय बाजारों के विकास तथा उदारीकरण द्वारा सरल बना दिया गया था (हूगदुइन और अन्य, 2010)।

5.37 मौद्रिक नीति और कर्ज प्रबंध नीति के बीच आदर्श संघर्ष, नीति ब्याज दर निर्धारित करने संबंधी निर्णय से संबद्ध है। इसी प्रकार, राजकोषीय नीति और कर्ज प्रबंध नीति के बीच का संघर्ष अल्पावधि में (जो आम तौर पर निर्वाचक चक्र में आता है) अथवा मध्यावधि/दीर्घावधि में कर्ज चुकौती लागत को कम रखने के विकल्प से संबंधित है (और इसलिए घाटा लक्ष्य को पूरा कर रहे हैं) नीतियों के पृथक्करण से यह अपेक्षा थी कि इस प्रकार के संघर्षों से बचा जाए और नीति विश्वसनीयता में सुधार किया जाए। तद्नुसार, न्यूज़ीलैंड, बेल्जीयम, फ्रांस, आयरलैंड, पुर्तगाल, स्वीडन डेन्मार्क और युनाइटेड किंग्डम जैसे देशों ने कर्ज प्रबंध को परिवर्ती सीमाओं तक विकेंद्रीकृत करने का निर्णय लिया है।

5.38 यह भी समझा गया है कि नीति विकेंद्रीकरण की प्रभावोत्पादकता और उसकी विश्वसनीयता निम्नलिखित पर निर्भर थी (i) टिन्बर्गन नियम, अर्थात् अधिक से अधिक स्वतंत्र नीति उपकरण जितने अधिक उद्देश्य थे, एक ऐसी आवश्यकता जिसे अभ्यास में पूरा करना कठिन है; और (ii) समग्र नीति मिश्रण में सुसंगति । इस प्रकार नीति समन्वय 'वांछित' नीति मिश्रण पाने के लिए आवश्यक हो गया। राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान और यूरो क्षेत्र में स्थिरता और संवृद्धि समझौता, जिसने घाटे और/अथवा कर्ज की उच्चतम सीमा प्रदान की, इस प्रकार के समन्वय तंत्र के उदाहरण हैं।

5.39 आई एम एफ और विश्व बैंक द्वारा, नीतियों का इस प्रकार का पृथक्करण भी वांछित समझा गया था, जैसा कि 2003 में सार्वजनिक कर्ज प्रबंध पर उनके द्वारा जारी दिशा निर्देशों में प्रतिबिंबित हुआ है और, विशेष रूप से ''जहाँ वित्तीय विकास का स्तर अनुमति देता है, वहाँ कर्ज प्रबंध और मौद्रिक नीति उद्देश्यों तथा उत्तरदायित्वों का पृथक्करण होना चाहिए।'' (दिशा-निर्देश 1-3)। उसी दिशा-निर्देश में इस बात पर जोर दिया गया है ''कर्ज प्रबंधकों, राजकोषीय नीति परामर्शदाताओं और केंद्रीय बैंकरों को उनके विभिन्न नीति उपकरणों के बीच अंतर-निर्भरताओं को देखते हुए कर्ज प्रबंध, राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के उद्देश्यों की एक समझ में हिस्सा बँटाना चाहिए और कर्ज प्रबंधन, राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों को सरकार की वर्तमान तथा भविष्य की चलनिधि आवश्यकताओं पर सूचना को साझा करना चाहिए। ''

5.40 वित्तीय विकास के स्तर पर उक्त दो कार्यों का अनुशंसित सशर्त पृथक्करण महत्वपूर्ण है। जैसा कि ब्लोमेंस्तें और टर्नर (2011) व्याख्या करते हैं, जब मौद्रिक नीति और कर्ज प्रबंध ढांचे अधिक विवेकी हो जाते हैं, केंद्रीय बैंक अन्तर-बैंक बाजार के बहुत ही कम स्तर में ही कार्य करते हुए ब्याज दरों के स्पेक्ट्रम को प्रभावित करने में समर्थ होता है। स्थानीय पूंजी बाजार के विकास के साथ, सरकारी प्रतिभूति बाजार विकसित करने में केंद्रीय बैंक की भूमिका कम हो गई है। दीर्घावधि बाजार-आधारित निधीयन की जोखिम-समायोजित लागत को न्यूनतम करने के सार्वजनिक कर्ज प्रबंध के प्रधान उद्देश्य के साथ, उक्त दो कार्यों का पृथक्करण वांछित होने के अतिरिक्त व्यावहारिक भी हो जाता है।

संकट के बाद का अनुभव: क्या बदला ?

5.41 वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में सरकारी कर्ज प्रबंध के बारे में प्रत्यक्ष ज्ञान में परिवर्तन हो गया हैं। वैश्विक वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति द्वारा अधिकृत एक अध्ययन दल (अध्यक्षः श्री पॉल फिशर) ने मई 2011 में पाया कि निम्नलिखित कारणों से वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध, मौद्रिक नीति तथा वित्तीय स्थिरता के बीच पारस्परिक क्रिया की शक्ति में वृद्धि हुई है (i) आर्थिक सुधार को समर्थन देने के लिए राजकोषीय प्रोत्साहन कार्यक्रमों को प्रतिबिंबित करते हुए सरकारी घाटे और कर्ज में तीव्र वृद्धि । इसके अलावा, अधिसंख्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बकाया कर्ज की औसत परिपक्वता कम हो गई है; (ii) केंद्रीय बैंक द्वारा परिवर्ती अवशिष्ट परिपक्वता वाली सरकारी प्रतिभूतियों की मुख्य रूप से बड़े पैमाने पर खरीद में गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति का प्रयोग, उसके द्वारा मौद्रिक प्राधिकारी और कर्ज प्रबंधक के परिचालन क्षेत्रों को धूमिल किया गया; (iii) नई विवेकपूर्ण चलनिधि अपेक्षाओं को लागू किया जाना जिनसे सरकारी प्रतिभूतियों के लिए बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा मांग में वृद्धि हो गई, जबकि कुछ देशों में सरकारी प्रतिभूतियों की जोखिम-प्रवणता में वृद्धि हुई है; और

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की सामान्य प्रक्रिया द्वारा सुलभ कराये गये सरकारी कर्ज के विदेशी स्वामित्व में वृद्धि ।

5.42 परिणाम के रूप में, राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध (एस डी एम) के भाग के रूप में परिपक्वता, अनुसूचीकरण और निर्गम के संबंध में निर्णयों ने, जिनका पहले अन्य नीति क्षेत्रों पर सीमित प्रभाव था, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता पर महत्वपूर्णता से प्रभाव डालना प्रारंभ कर दिया था।

वित्तीय स्थिरता पर कर्ज प्रबंध का प्रभाव

5.43 अल्पावधि कर्ज के अंश में वृद्धि (जिसे दीर्घावधि कर्ज से भिन्न, आसानी से विस्तारित नहीं किया जा सकता है), पुनर्वित्तीयन और विस्तार जोखिमों में वृद्धि की ओर प्रेरित करती है, विशेष रूप से जब निवेशकों (अधिकांशतः बैंक) के पास अपने संविभाग में परिपक्वता अवधि वाले सरकारी बांडों का बहुत ही कम भाग होता है। यह, क्रमशः प्रणालीगत और वित्तीय स्थिरता जोखिमों की ओर प्रवृत्त करता है। जब कर्ज का स्तर अपने आप में राजकोषीय निरंतरता चिंताओं का आह्वान करता है तो समस्याएं बढ़ जाती हैं। सरकारी कर्ज के विदेशी स्वामित्व के परिणामस्वरूप देशी जी-सेक, बाजार को समुद्रपारीय आघात का संचारण होता है, जिससे निवेशकों को मार्क टू मार्केट (एम टी एम) हानियों का सामना करना पड़ सकता है। विदेशी मुद्राओं में राष्ट्रिक बांडों के निर्गम से सरकार को अपनी देशी मुद्रा में मूल्यवर्गित आस्तियों तथा आंशिक रूप से, विदेशी मुद्रा में मूल्यवर्गित देयताओं के बीच मुद्रा बेमेलपन का सामना करना पड़ता है जिसका वित्तीय स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

मौद्रिक नीति पर कर्ज प्रबंध का प्रभाव

5.44 अल्पावधि कर्ज निर्गमों में वृद्धि का परिणाम मुद्रा बाजार में सरकार द्वारा अधिक गहन सहभागिता के रूप में होता है, जो मौद्रिक नीति के लिए एक परिचालन क्षेत्र है। यह नीति ब्याज दरों (अल्पावधि) के निर्धारण में हस्तक्षेप कर सकती है। इसके अलावा, चूंकि केंद्रीय बैंकों द्वारा खरीदे गये सरकारी बांड वित्तीय संकट के प्रति उनकी मौद्रिक नीति अनुक्रिया के भाग के रूप में थे, बाजार के दीर्घावधि स्तर पर मौद्रिक नीति पर कर्ज प्रबंध का प्रभाव भी महसूस किया गया था। इससे कर्ज के उच्च स्तर के अलावा, जो राष्ट्रिक जोखिम चिंताओं को बढ़ा देता है, (जैसा कि कुछ यूरो क्षेत्र देशों में हुआ था), वह मौद्रिक नीति परिचालनों में संपार्श्विक के रूप में सरकारी बांडों की पात्रता को कम कर सकता है तथा इस प्रकार, मौद्रिक नीति संचारण को बाधित कर सकता है।

5.45 इस संदर्भ में, फिशर अध्ययन दल (2011) ने पाया कि अन्य नीति कार्यों से राष्ट्रिक कर्ज प्रबंध (एस डी एम) का पृथक्करण सामान्यतया गहन वित्तीय बाजारों वाली अर्थव्यवस्थाओं में रेखांकित होता है। यह विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में प्रचलित प्रथा से भिन्न है, जहाँ केंद्रीय बैंक अवरुद्धता प्रयोजन से प्रतिभूतियां जारी कर सकता है अथवा सरकारी कर्ज नकदी जमाराशियों को नियंत्रित कर सकता है जिसमें केंद्रीय बैंक द्वारा नीति समन्वय अथवा कर्ज प्रबंध आम तौर पर मानक रहा है। उक्त अध्ययन दल ने एस डी एम और मौद्रिक नीति कार्यों की परिचालन स्वतंत्रता के लिए वर्तमान व्यवस्थाओं द्वारा उत्पन्न वास्तविक बाधाओं का पता नहीं लगाया है। ऐसी व्यवस्थाओं को उलटना अध्ययन दल की राय में जोखिम प्रवण होगा। इसके बजाय उक्त दल ने महसूस किया है कि वर्तमान वातावरण में अथवा जहाँ वित्तीय प्रणालियां अब भी विकासशील हैं, यह उपयोगी होगा कि कर्ज प्रबंधक लागत एवं जोखिम का व्यापक दृष्टिकोण अपनाएं तथा केंद्रीय बैंक एस डी एम क्रियाकलापों को साथ-साथ रखें।

5.46 हाल के अनुभव ने इस बात का समर्थन किया है कि बकाया कर्ज के परिपक्वता ढांचे तथा जोखिम विशेषताओं के लिए मध्यावधि रणनीतिक परिणाम वित्तीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण हैं। इस संदर्भ में, उक्त अध्ययन दल ने पाया है, ''यह प्रासंगिक एजेंसियों के बीच पारस्परिक संप्रेषण के महत्व को रेखांकित करता है, तथापि प्रत्येक एजेंसी अपनी-अपनी भूमिका के लिए स्वतंत्रता और जवाबदेही का निर्वाह कर रही है। इस प्रकार का दृष्टिकोण स्टॉकहोम सिद्धांतों के सिद्धांत 6 से सुसंगत है। स्टॉकहोम सिद्धांत राष्ट्रिक जोखिम और सार्वजनिक कर्ज के उच्च स्तर को नियंत्रित करने हेतु मार्गदर्शी सिद्धांत है, जो हाल ही में 33 उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के कर्ज प्रबंधकों और केंद्रीय बैंकरों द्वारा जारी किये गये थे।''

5.47 यह सुस्पष्ट है कि फिशर अध्ययन दल (2011) तथा स्टॉकहोम सिद्धान्तों (2010) ने कर्ज प्रबंध को केंद्रीय बैंक से अलग करने के सिवाय सिफारिश करना बन्द कर दिया है। यद्यपि आई एम एफ-विश्व बैंक द्वारा 2003 में (अर्थात् संकट-पूर्व की अवधि में) जारी सार्वजनिक कर्ज प्रबंध संबंधी दिशा-निर्देशों में इस पृथक्करण को अर्थव्यवस्था में वित्तीय विकास के स्तर पर सशर्त अनुशंसित

किया गया था। विचारधारा के इन दो सेटों के बीच अंतर अब सरकारी कर्ज प्रबंध, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता के बीच गहन अन्तर्संबंधों तथा कर्ज प्रबंधकों और केंद्रीय बैंकों के बीच पारस्परिक संप्रेषण पर बढ़े हुए जोर को मान्यता प्रदान करता है, तथापि, प्रत्येक एजेंसी अपनी स्वतंत्रता और जवाबदेही का निर्वाह करती है।

5.48 इसी प्रकार का मामला ब्लोममेंस्तें और टर्नर (2011) द्वारा बनाया गया है। वे तर्क प्रस्तुत करते हैं कि जहाँ वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति नीति अनुक्रियाओं ने सार्वजनिक कर्ज प्रबंध तथा मौद्रिक नीति के बीच संबंध को थोड़ा धुंधला किया है और यह कि कर्ज प्रबंध के प्रति परंपरागत व्यष्टि आर्थिक दृष्टिकोण का समष्टि आर्थिक विचारों के साथ संघर्ष होने की संभावना है, वे केंद्रीय बैंकरों, कर्ज प्रबंधकों तथा राजकोषीय प्राधिकारियों के वर्तमान उत्तरदायित्वों में परिवर्तन करने के ऐसे किसी निहितार्थों के आहरण के खिलाफ सचेत करते हैं जिनसे स्पष्ट उत्तरदायित्वों को सौंपने तथा अल्प दृष्टि वाली नीतियों को रोकने का (अच्छा) लाभ प्राप्त होता हो। वे बताते हैं कि वर्तमान व्यवस्थाओं में किसी प्रकार के अपेक्षित परिवर्तन से, हालांकि सरकारी कर्ज प्रबंध की समष्टि अर्थशास्त्र को पूर्ण रूप से समझने से लाभ मिलेगा तथा उस पर सर्वसम्मति बनाने में सहायता मिलेगी एवं राजनैतिक अथवा संस्थागत दवावों के अतिरिक्त उपयुक्त अभिशासन तंत्र के बारे में समझा जा सकेगा।

5.49 हालांकि एक भिन्न मामला गुडहार्ट (2010) द्वारा बनाया गया है, जो कहता है ''किन्तु अब अनेक देश कर्ज स्तरों के तेजी से बढ़ने की संभावना का सामना एक ऐसे बिन्दु तक करते हैं, जहाँ से वे एक बार और बाजार सहभागियों के विश्वास को जांच सकते हैं। कर्ज प्रबंध फिर से नीति के समग्र संचालन में एक महत्वपूर्ण तत्व बनता जा रहा है, जैसा कि यूनान की घटनाओं से सुस्पष्ट है। कर्ज प्रबंध को अब लम्बे समय तक एक नेमी कार्य के रूप में नहीं देखा जा सकता है जिसे एक अलग, स्वतंत्र निकाय को प्रत्यायोजित किया जा सके। इसके बजाय, इस प्रकार का प्रबंध मौद्रिक नीतियों (मुद्रास्फीति लक्ष्यों तथा प्रणालीगत स्थिरता दोनों) और राजकोषीय नीति के बीच चौराहे (क्रोस रोड्स) पर पड़ता है। जब बाजार कठिनाई में होता है तथा सरकारी बांड बाजारों में ऐसी संभावना होती है, तब उच्च मानसिक क्षमता वाली बाजार युक्ति के साथ समग्र राजकोषीय रणनीति को संयुक्त करने की आवश्यकता होती है। उच्च मानसिक क्षमता वाली बाजार युक्ति को केंद्रीय बैंक अपने पेशे के रूप में अपना सकते हैं। केंद्रीय बैंकिंग के आने वाले युग के दौरान, उन्हें राष्ट्रीय कर्ज के प्रबंध की उनकी भूमिका की ओर लौटने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।''

भारतीय मामला

5.50 गवर्नर सुब्बाराव (मई 2011) ने तर्क प्रस्तुत किया है कि जहाँ संकट-पूर्व के वर्षों में राजकोषीय सुदृढ़ीकरण और संस्थागत विकास की ओर प्रगति ने केंद्रीय बैंक से एक डी एम ओ को कर्ज प्रबंध के पृथक्करण से भावी क्षमता लाभ की ओर संकेत किया था, संकट के बाद के परिदृश्य में, इस प्रक्रिया के अंश और गति पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में, यह दोहराना उचित होगा कि सार्वजनिक कर्ज प्रबंध के मामले में आर बी आई का रिकार्ड प्रभावी रहा है। जैसा कि गवर्नर सुब्बाराव ने कहा, ''10 वर्ष के आस-पास सरकारी कर्ज की औसत परिपक्वता के साथ, विश्व में सबसे लंबी-परिपक्वता रूपरेखा वाले देशों में भारत का स्थान है, जिसने संकट के दौरान प्रमुख शक्ति तथा सहजता का स्रोत होना प्रमाणित किया था।''

5.51 2008-09 और 2009-10 के दौरान कर्ज प्रबंध कार्यों में रिज़र्व बैंक की दक्ष कार्य प्रणाली ने अपने पिछले रिकार्ड को दोषमुक्त कर दिया है, जब भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभावों का सामना करना पड़ा था। वास्तव में, चलनिधि प्रबंध परिचालनों को, विदेशी मुद्रा दर प्रबंध तथा गैर-विघटनकारी आंतरिक कर्ज प्रबंध कार्यों के साथ तुल्यकालिक करते हुए आर बी आई यह सुनिश्चित करने में समर्थ था कि प्रणाली में उपयुक्त चलनिधि बनाए रखी जाती थी ताकि ऋण की समस्त तर्क संगत आवश्यकताओं को विशेष रूप से, कीमत तथा वित्तीय स्थिरता के उद्देश्य के अनुरूप उत्पादक प्रयोजनों के लिए पूरा किया जा सके। रिज़र्व बैंक के चलनिधि इंजेक्शन प्रयास, बड़ी मात्रा में होते हुए भी, अन्य अनेक केंद्रीय बैंकों से भिन्न, पात्र प्रतिपक्षियों के साथ अथवा रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में आस्ति गुणवत्ता पर समझौता किये बिना प्राप्त किये जा सके।

5.52 एम एस एस के निवेश मोचन (शोधन, वापसी-खरीद और अवपृथक्करण) और आरक्षित निधि आवश्यकताओं (सी आर आर) में कटौती के माध्यम से प्राप्त चलनिधि विस्तार ने सुनिश्चित किया कि अन्य अनेक केंद्रीय बैंकों से भिन्न रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में फिर विस्तार न हो। इसके अलावा, सरकारी बाजार उधार कार्यक्रम के निर्बाध संचालन तथा अधिक प्रभावी चलनिधि प्रबंध के

लिए फरवरी 2009 में सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामी आधारित खुला बाजार खरीद प्रारंभ की गई थी। विशेष रूप से दबाव की अवधि के दौरान चलनिधि प्रबंध, विदेशी मुद्रा विनिमय दर प्रबंध और आंतरिक कर्ज प्रबंध की यह समकालिकता अत्यधिक सुसाध्य हो गई थी क्योंकि ये परिचालन एक ही संगठन के भीतर स्थित थे, यद्यपि मौद्रिक और कर्ज प्रबंध कार्यात्मक रूप से अलग रहे थे।

5.53 आम तौर पर, भारत में सरकारी, उधार कार्यक्रम के महत्व को देखते हुए, कर्ज प्रबंध, संसाधन जुटाने में प्रयोग करने के बजाय समग्र समष्टि आर्थिक प्रबंध का भाग बन जाता है। परिणामस्वरूप, केंद्रीय बैंक, जिनके पास समग्र प्रत्यक्ष ज्ञान, आवश्यक विशेषज्ञता तथा उपकरण होते हैं, डी एम ओ के बजाय, जिनके पास सीमित अधिदेश होते हैं, कर्ज प्रबंध का संचालन करने की दृष्टि से बेहतर स्थान पर होते हैं। दूसरी ओर, यदि कर्ज प्रबंध को केंद्रीय बैंक से बाहर अंतरित किया गया होता तो संघर्ष का समाधान और भी अधिक कठिन हो गया होता क्योंकि केंद्रीय बैंक से बाजार अस्थिरता तथा सरकारी उधार कार्यक्रम से उत्पन्न बाजार अपेक्षाओं को नियंत्रित करने की अपेक्षा की जाती। अन्ततः जैसा कि सी एफ एस ए के अध्यक्ष द्वारा तर्क प्रस्तुत किया गया है, राज्य सरकारों के बाजार उधार कार्यक्रम में सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता-इसके महत्व को देखते हुए-भारतीय संघीय ढांचे के केंद्र और राजनैतिक अर्थव्यवस्था के विचारों के साथ, कर्ज प्रबंध कार्य को केंद्रीय बैंक से अलग करने का मामला कमज़ोर हो जाता है।

5.54 इसलिए, आगे बढ़ते हुए इस चरण पर कर्ज प्रबंध को रिज़र्व बैंक से पृथक करने के प्रस्ताव पर शायद पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। इसके बजाय, वित्त मंत्रालय में पहले से ही स्थापित मध्यवर्ती कार्यालय की विशेषज्ञता की उचित रूप से स्तर-वृद्धि करते हुए, उसे अंतर्राष्ट्रीय अनुभव और अनुसंधान साहित्य द्वारा विशिष्टता के साथ प्रस्तुत की गई चुनौतियों से निपटने के कार्य में लगा दिया जाए। कर्ज प्रबंध संबंधी विषयों पर आर बी आई और मध्यवर्ती कार्यालय के बीच घनिष्ठ सहयोग बढ़ाये जाने की भी आवश्यकता है।

नकदी प्रबंध

5.55 हाल के वर्षों में, सुदृढ़ नकदी प्रबंध का महत्व बढ़ता जा रहा है। अर्थात् एक किफायती विधि से सरकार के अल्पावधि नकद आगमन के समय और उसकी प्रमात्रा का प्रबंध करना जिससे विभिन्न जोखिम न्यूनतम हो सके जैसे परिचालन संबंधी, ऋण और बाजार जोखिम । सरकारें, तदनुसार अधिक परिष्कृत नकदी प्रबंध कार्य का विकास कर रही हैं, और विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, अपेक्षाकृत रूप से निष्क्रिय से अधिक सक्रिय नकदी प्रबंध की ओर परिवर्तन की ओर झुकाव बढ़ गया है। सक्रिय नकदी प्रबंध का लक्ष्य केंद्रीय बैंक में रखे गये राजकोष एकल खाता (टी एस ए) में अप्रयुक्त जमा नकदी को न्यूनतम करना तथा केंद्रीय बैंक में रखे गये मुख्य राजकोष परिचालन खाते में अतिरिक्त जमा रकम पर प्रतिलाभ में अधिकतम वृद्धि करना है। सक्रिय नकदी प्रबंध में सरकारी नकदी प्रबंधक (जो केंद्रीय बैंक भी हो सकता है) द्वारा वित्तीय बाजार हस्तक्षेप निहित होता है, जिसका लक्ष्य निवल नकदी प्रवाह में दैनिक बेमेल स्थिति को दूर करना और लचीलेपन को इस प्रकार से जोड़ना है कि सरकारी नकदी आगमन तथा बहिर्वाहों के समय को मैच किया जा सके। भारत में केंद्र सरकार के नकदी प्रबंध कार्यों में भी मध्य-1990 के दशक से काफी अधिक सुधार हुए हैं (बॉक्स V.2) ।

5.56 कर्ज प्रबंध संबंधी भारत सरकार के आंतरिक कार्यदल, 2008 (अध्यक्षः डॉ. जहाँगीर अज़ीज़) ने नकदी प्रबंध और मौद्रिक नीति के बीच घनिष्ठ संबंध को रेखांकित किया है कि सरकारी खातों में भारी मात्रा में नकदी का आगमन/और खातों से बहिर्गमन का मुद्रा बाजार पर महत्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है। इसके अलावा, खजाना बिल, जो नकदी प्रबंध के आम लिखत हैं, निम्नलिखित के संभाव्य स्रोत होना पाये गयेः (i) अल्पावधि ब्याज दरों में अतिरिक्त अस्तिरता और (ii) मौद्रिक नीति के संकेतक प्रभाव के साथ हस्तक्षेप। कार्य दल ने यह भी पाया है कि भारत में सरकारी नकदी प्रबंध, ''दिन के अंत में शेष राशि प्रबंध का अभाव, अप्रयुक्त जमा राशियों के रूप में अधिशेष निधियों की उपस्थिति, और नकदी शेष की सूचना बजट डिविजन को प्रेषित करने में विलंब'' की वजह से अधिकांशतः निष्क्रिय था।

5.57 नीति संघर्ष और नकदी प्रबंध की निष्क्रिय प्रकृति को इस बात के लिए जिम्मेवार ठहराया गया कि सरकारी नकदी प्रबंध का अंतरण राष्ट्रीय राजकोष प्रबंध एजेंसी (एन टी एम ए) में हो रहा था। हालांकि, अंतर्राष्ट्रीय अनुभव से यह उद्घाटित हुआ है कि सरकारी नकदी प्रबंध आम तौर पर, विशेष रूप से कार्य की दैनिक

बॉक्स V.2
भारत में केंद्र सरकारी नकदी प्रबंध

सरकार के वर्तमान नकदी प्रबंध कार्य द्वि-स्तरीय प्रणाली के माध्यम से किये जा रहे हैं, जिसमें वाणिज्य बैंक प्रथम स्तर के रूप में कार्य कर रहे हैं और रिज़र्व बैंक [केंद्रीय लेखा अनुभाग (सी ए एस), नागपुर] इस प्रणाली का द्वितीय स्तर है। उक्त व्यवस्था अधिकृत वाणिज्य बैंकों की एक प्रणाली के माध्यम से कार्य करती है (नियंत्रक और महालेखा परीक्षक द्वारा अधिकृत) जिसके साथ भारत सरकार के विभिन्न विभाग/मंत्रालय अपने लेखा रखते हैं। विभाग/मंत्रालय की समस्त प्राप्तियों को अधिकृत बैंक द्वारा रखे गये लेखा में जमा किया जाता है और क्रम से संबंधित बैंक से अपेक्षित है कि वह उन्हें भारत सरकार द्वारा सी ए एस, नागपुर में रखे गये राजकोष एकल खाता (टी एस ए) में अंतरित करे। नकदी प्राप्तियों को उसी दिन जमा किया जाता है, जबकि चेक द्वारा प्राप्तियों को निम्नांकित आधार पर जमा किया जाता हैः इलेक्ट्रॉनिक विधि से टी+।, स्थानों (जहाँ शाखा समाशोधन क्षेत्र के भीतर है) टी +3 और टी+5 (बाहर के स्थानों के लिए)।

6 मार्च 1997 को रिज़र्व बैंक और भारत सरकार द्वारा हस्ताक्षर किये गये द्वितीय अनुपूरक करार के अनुसार सरकार के घाटे का स्वतः मुद्रीकरण बंद कर दिया गया था और उसके स्थान पर 1 अप्रैल 1997 से प्रभावी सरकार की अल्पावधि निधीयन आपवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यू एम ए) और ओवर ड्राफ्ट (ओडी) योजना शुरू की गई। यदि सरकार की नकदी जमा उसके द्वारा किसी एक दिन बनाए रखने के लिए अपेक्षित न्यूनतम नकदी जमा (किसी दिन के लिए 100 मिलियन रुपये, प्रत्येक शुक्रवार, 31 मार्च और 30 जून को छोड़ कर, जब वह 1 बिलियन रुपये होनी चाहिए) से कम हो जाती है तो न्यूनतम निर्धारित स्तर तक नकदी जमा को पुनः बनाए रखने के लिए आम तौर पर छः माही आधार पर निर्धारित पूर्व घोषित सीमा तक अर्थोपाय अग्रिम सुविधा के अंतर्गत रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को एक अल्पावधि अग्रिम राशि स्वतः प्रदान की जाती है। डब्ल्यू एम ए प्रणाली के अंतर्गत अग्रिम पारस्परिक सहमति से निर्धारित ब्याज दर पर दिये जाते हैं जो वर्तमान में रेपो दर पर है और उनकी चुकौती तीन महीने के भीतर सरकार द्वारा पूर्ण रूप से करनी होती है। रिज़र्व बैंक सरकार को एक ओवर ड्राफ्ट सुविधा भी प्रदान करता है जिसके अंतर्गत डब्ल्यू एम ए सीमा के अतिरिक्त एक उच्चतर ब्याज दर पर अतिरिक्त अग्रिम उपलब्ध कराये जाते हैं जो वर्तमान में रेपो दर से दो प्रतिशत अंक अधिक है। सरकार को निरंतर 10 कार्य-दिवसों से अधिक के लिए ओ डी की समय सीमा में विस्तार करने की अनुमति नहीं है।

विलोमतः, 2003-04 तक, जब कभी सरकार के खातों में अधिशेष की स्थिति दिखाई दी, न्यूनतम निर्धारित नकदी जमा से अधिक की राशि स्वतः ही रिज़र्व बैंक द्वारा उसके अपने संविभाग से उपलब्ध कराई गई केंद्र सरकार की दिनांकित प्रतिभूतियों में निवेश कर दी जाती थी। रिज़र्व बैंक के अवरुद्धता परिचालनों के कारण उसके संविभाग से सरकारी प्रतिभूतियों के निःशेषण के साथ, रिज़र्व बैंक ने सरकार के साथ परामर्श करके भारत सरकार की अधिशेष जमाराशियों के निवेश पर एक सीमा निर्धारित कर दी थी। उक्त उच्चतम सीमा चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) के अंतर्गत बैंक के मौद्रिक नीति परिचालनों से उत्पन्न प्रतिभूतियों की आवश्यकता को पूरा करने के बाद रिज़र्व बैंक के संविभाग में प्रतिभूतियों की उपलब्धता की शर्त के अधीन है। सीमा से अधिक की सरकारी अधिशेष जमाराशियां रिज़र्व बैंक के सी ए एस. नागपुर में एक अप्रयुक्त नकदी जमा राशि के रूप में रखी जाती है और उस पर कोई ब्याज अर्जित नहीं होता है।

खजाना बिलों का इस्तेमाल करने के अतिरिक्त, केंद्र सरकार ने नकदी प्रबंध प्रयोजनों के लिए 2010-11 में नकदी प्रबंध बिल (सी एम बी एस) प्रारंभ किये । सी एम बी एस. खजाना बिलों की समस्त प्रजातिगत विशेषताओं के साथ अमानत परिपक्वता वाले लिखत हैं। 2011-12 के दौरान भारी मात्रा में सी एम बी एस जारी किये गये थे।

और गतिशील प्रकृति के कारण बाद के चरण में कर्ज प्रबंध के बजाय कर्ज प्रबंध कार्यालय में स्थानांतरित हो जाते हैं । इस संदर्भ में, यह देखते हुए कि ''एन टी एम ए द्वारा नकदी प्रबंध अल्पावधि में कठिन हो सकता है, क्योंकि परिचालन की दृष्टि से वह गहन है, उसके लिए अधिक स्टाफ तथा विभिन्न एजेंसियों और प्रणालियों के बीच घनिष्ठ सहयोग की आवश्यकता होती है,'' कार्य दल ने यह सिफारिश की कि भारत में सरकारी नकदी प्रबंध के लिए वर्तमान व्यवस्था को अल्पावधि में रखा जाए और इस कार्य को धीरे-धीरे मध्यावधि में एन टी एम ए को अंतरित कर दिया जाना चाहिए।

5.58 जब सरकारी नकदी प्रबंध का कार्य कुछ समय के लिए आर बी आई के पास रहना जारी रहेगा, आगे और सुधार पर विचार किया जा रहा है। जैसा कि मौद्रिक नीति की परिचालन क्रियाविधि संबंधी कार्य दल, 2011 (अध्यक्षः श्री दीपक मोहंती) ने कहा, ''चलनिधि प्रबंध पर सरकार की नकद जमाराशियों के प्रभाव को देखते हुए, आर बी आई और राजकोषीय प्राधिकारी के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता है। इस संदर्भ में उक्त दल यह समझता है कि सरकारी नकद जमाराशियों की नीलामी का मामला सरकार और आर बी आई के विचाराधीन है। इसलिए यह दल अनुशंसा करता है कि प्रणाली

बॉक्स V.3
सरकारी नकदी प्रबंध और चलनिधि प्रबंध के बीच संघर्ष

यदि सरकार अपनी अधिशेष नकदी जमाराशियां एक ऐसे बाजार में निवेश करती है जो अधिशेष चलनिधि वाला है और केंद्रीय बैंक के पास अतिरिक्त चलनिधि को खपाने के लिए अपने संविभाग में पर्याप्त प्रतिभूतियां न हो अथवा केंद्रीय बैंक पर केंद्रीय बैंक तुलन पत्र के लिए निहितार्थों तथा सरकार को अंतरित करने के लिए अधिशेष की उपलब्धता के साथ उसकी अपनी प्रतिभूतियां जारी करने का दबाव डाला जाता है (उदाहरणार्थ केंद्रीय बैंक के बिल), तो नकदी प्रबंध तथा चलनिधि प्रबंध के बीच तनाव उभर सकता है। नकदी प्रबंध और मौद्रिक नीति के बीच प्रभावी समन्वय में केंद्रीय बैंक के पास अप्रयुक्त अधिशेष नकद जमाराशियां रखा जाना निहित होगा, जो चलनिधि की निष्क्रिय अवरुद्धता को सुसाध्य बनाता है।

यदि सरकार नकद घाटे में है, जब कि बाजार में अधिशेष राशियां हैं और केंद्रीय बैंक तथा सरकार चलनिधि प्रबंध और नकदी प्रबंध के लिए क्रमशः दो भिन्न लिखतों का इस्तेमाल करते हैं (किन्तु समान परिपक्वता के) तो बाजार चलनिधि विखंडित हो सकती है, जिससे चलनिधि प्रीमियम बढ़ सकता है। उदाहरण के लिए, 2004 से पूर्व क्रोएशिया के वित्त मंत्रालय और केंद्रीय बैंक ने अपने-अपने बिल जारी किये। समान परिपक्वता वाले बिलों के लिए टी-बिल्स के लिए बट्टा 8 प्रतिशत था, जब कि केंद्रीय बैंक (सी बी) बिलों के लिए वह केवल 1 प्रतिशत था (म्यू 2006)।

बाजार विखंडन को टालने के लिए अधिक उपयुक्त विकल्प यह होगा कि खजाना बिल नीलामियों में एड-ओन्स का इस्तेमाल मौद्रिक नीति कार्यान्वयन के लिए उपयुक्त लिखत के रूप में किया जाए (विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2001)। विकल्पतः अथवा अनुपूरक के रूप में बाजार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत पूर्व में जारी वर्तमान सरकारी दिनांकित प्रतिभूतियों के पुनः जारीकरण पर विचार किया जा सकता है, यदि अधिशेष चलनिधि अधिक टिकाऊ प्रकृति की महसूस होती हो। बाजार सहभागियों में असमंजस को टालने के लिए, प्रत्येक खजाना बिल की नीलामी के लिए केंद्रीय बैंक द्वारा एड-ओन्स की राशि की घोषणा की जाने के द्वारा पारदर्शिता सुनिश्चित करना आवश्यक है। इसके अलावा, यह सुनिश्चित करने के लिए कि चलनिधि प्रबंध के प्रयोजन से जारी प्रतिभूतियों की बिक्री से प्राप्त आय सरकारी व्यय के वित्तपोषण के लिए उपलब्ध नहीं होनी चाहिए बल्कि वह केंद्रीय बैंक में अवरुद्ध रहेगी, सुस्पष्ट और सुपरिभाषित व्यवस्था की जानी चाहिए। यह सुस्पष्ट रूप से विनिर्दिष्ट करने की आवश्यकता होगी कि क्या एक लागत हिस्सेदारी करार होना चाहिए अथवा क्या सरकार अपने बजट स्रोतों से व्यय को पूरा करेगी। उन अपवादात्मक परिस्थितियों को भी विनिर्दिष्ट करने की आवश्यकता होगी जिनके अंतर्गत राजकोष का वित्तपोषण करने के लिए सरकारी जमा राशियों का इस्तेमाल किया जा सकेगा।

अनेक देशों ने विगत समय में चलनिधि प्रबंध के प्रयोजन के लिए केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियों के स्थान पर सरकारी प्रतिभूतियां जारी की हैं। इन देशों में ब्राज़ील (2002 से), भारत (2004 से एम एस एस के अन्तर्गत; वे अपवादात्मक परिस्थितियां 2008-9 में विनिर्दिष्ट की गई थी, जिनके अंतर्गत राजकोष के वित्तपोषण के लिए अलग रखी गई सरकारी जमा राशियों का इस्तेमाल किया जा सकता था), मैक्सिको, क्रोएशिया और मैसीडोनिया। यू के में डी एम ओ और बैंक ऑफ इंग्लैंड इस प्रकार के एक करार पर सहमत हो गये हैं (यद्यपि वह प्रयुक्त नहीं हुआ है) (विलियम्स, 2010)। मोज़ाम्बिक में इस प्रक्रिया के उलट हुआ, चूंकि केंद्रीय बैंक अपने स्वयं के तुलन पत्र से केंद्रीय बैंक बिल जारी करता है, किंतु कुछ स्टॉक सरकार के पास दृष्टिबंधक रखा जा सकता है। न्यूज़ीलैंड में केंद्रीय बैंक सरकार के खाते में सीधे पास की गई आय से अपनी स्वयं की विवेकाधीन शक्तियों से (राजकोष के साथ सहमत ढांचे के भीतर) खजाना बिल जारी कर सकता है। सभी देशों का अनुभव यह बताता है कि कुछ देशों में इस प्रकार की व्यवस्था ने संतोषजनक रूप से कार्य नहीं किया है चूंकि सरकार हमेशा मौद्रिक नीति प्रयोजनों के लिए अतिरिक्त खजाना बिल जारी करने की इच्छुक नहीं हो सकती है।

भिन्न परिपक्वताओं वाली प्रतिभूतियां जारी करने के लिए केंद्रीय बैंक और राजकोष के लिए एक वैकल्पिक ऑप्शन यह होगा कि जहाँ केंद्रीय बैंक चलनिधि के अवशोषण के लिए अल्पावधि पेपर्स जारी कर सकता है, राजकोष अपने घाटे का निधीयन करने के लिए दिनांकित प्रतिभूतियां जारी कर सकता है। उस घटना में, अस्थाई चलनिधि बेमेल स्थितियों का निधीयन करने के लिए सरकार के पास कोई साधन नहीं होता है। उदाहरण के लिए चीन और इंडोनेशिया में मुद्रा बाजार में सी बी बिलों का प्रभुत्व है और खजाना बिल नहीं के बराबर हैं। (विलियम्स, 2010)। कम लागत पर अल्पावधि और दीर्घावधि प्रतिभूतियां जारी करने के विकल्प से यह माना जाता है कि व्यापक, गहन और तरल सरकारी प्रतिभूति बाजार का विकास होगा। फिर भी, यदि बाजार विखंडन को प्रेरित करते हुए सी बी बिलों के प्राथमिक जारीकरण के प्रति सरकारी प्रतिभूतियों की अवशिष्ट परिपक्वता कम होती है तो संघर्ष को पूरी तरह से नहीं टाला जा सकता है।

जब बाजार अधिशेष स्थिति में कार्य करता है तो केंद्रीय बैंक के चलनिधि अवशोषण कार्यों के साथ केंद्रीय बैंक से सरकारी उधार का भी संघर्ष हो सकता है। सरकार अपनी अस्थायी नकदी बेमेल स्थिति का निधीयन करने के लिए खजाना बिलों के नीलामी आकार को घटा-बढ़ा सकती है अथवा नकदी प्रबंध बिल जारी कर सकती है। अतः केंद्रीय बैंक के लिए नीति विकल्प यह होगा कि वह चलनिधि प्रबंध के लिए उसी लिखत का इस्तेमाल करे जो सरकार द्वारा नकदी प्रबंध कार्यों के लिए किया गया, अपनी वित्तपोषण योजना के संबंध में सरकार के साथ सूचना शेयर करे और तदनुसार चलनिधि अवशोषण के प्रयोजन के लिए जारी करने योग्य खजाना बिलों की राशि में कमी-बेशी करे।

सरकारी नकदी जमाराशियों का नकदी प्रबंध और अस्थिरता

नकदी और चलनिधि प्रबंध के बीच सफल समन्वय का एक संकेतक केंद्रीय बैंक में सरकारी जमाराशियों की अस्थिरता को सीमित करने की डी एम ओ और केंद्रीय बैंक की योग्यता हो सकता है।

(जारी...)

(...समाप्त)

यू के में बैंक ऑफ इंग्लैंड से डी एम ओ को, जो राजकोष की एक कार्यपालक एजेंसी है, सरकार के दैनंदिन स्टर्लिंग नकदी प्रबंध का 2000 में अंतरण से पूर्व बकाया दैनिक शेष राशियों में महत्वपूर्ण भिन्नता थी। अंतरण के पश्चात्, 'अर्थोपाय अग्रिम' सुविधा के अंतर्गत बैंक ऑफ इंग्लैंड से लिये गये उधार का दैनिक आधार पर नकदी प्रबंध को सुसाध्य बनाने के लिए कोई इस्तेमाल नहीं किया गया था और 2008 के दौरान उक्त सुविधा की चुकौती होने तक जमा राशि लगभग 13.4 बिलियन पाउंड पर स्थिर थी (क्रॉस और अन्य, 2010)। दिसंबर 2008 के अंत में, जब वैश्विक वित्तीय संकट ऊँचाई पर था, एच एम राजकोष ने अस्थायी आधार पर बैंक ऑफ इंग्लैंड से राशियां उधार ली थी।

यूरो क्षेत्र में, यूरो क्षेत्र स्तर पर संकलित सरकारी जमाराशियां अत्यधिक अस्थिर स्वायत्त कारक रही है, जिसके कारण चलनिधि आवश्यकताओं के एक बहुत बड़े भाग के पूर्वानुमान में त्रुटियाँ हुई थी। 2006 में सरकारी जमाराशियों की उच्चतम अस्थिरता इटली में अनुभव की गई थी और उसके बाद स्पैन, आयरलैंड और यूनान में अनुभव की गई। इन देशों में, इटली और स्पैन में कर्ज प्रबंध का संचालन वित्त मंत्रालय (एम ओ एफ) में विभागीय आधार पर किया जाता है। यूनान में कर्ज प्रबंध का संचालन वित्त मंत्रालय की एक कार्यपालक एजेंसी द्वारा किया जाता है, जब कि आयरलैंड में एक सांविधिक डी एम ओ है। बेल्जीयम, जर्मनी, फ्रांस, लक्ज़ंबर्ग, दि नीदरलैंड्स, ऑस्ट्रिया, पुर्तगाल और फिन्लैंड में सरकारी जमाराशियों की अस्थिरता कम है। इन देशों में जहाँ ऑस्ट्रिया, जर्मनी और पुर्तगाल में सांविधिक डी एम ओ है, बेल्जीयम, फ्रांस, लक्ज़ंबर्ग, नीदरलैंड्स और फिन्लैंड में, डी एम ओ वित्त मंत्रालय में अवस्थित हैं। जिन देशों ने सांविधिक डी एम ओ स्थापित किये हैं (अर्थात् ऑस्ट्रिया, आयरलैंड, पुर्तगाल, स्वीडन, जर्मनी, हंगरी, स्लोवाकिया और आयर लैंड) वे यूरोपीय संघ के भाग हैं, यूरो क्षेत्र के सभी देशों में सांविधिक डी एम ओ/स्वतंत्र एजेंसियां नहीं हैं। इसके अलावा, डी एम ओ द्वारा नकदी प्रबंध का कार्य निष्पादन कर्ज प्रबंध के संस्थागत ढांचे से स्वतंत्र प्रतीत होता है।

में घर्षणात्मक तरलता में अस्थिरता के प्रमुख स्रोत का समाधान करने के लिए सरकार के साथ परामर्श करते हुए आर बी आई की विवेकाधीन शक्ति से सरकार की अधिशेष जमाराशियों की नीलामी की एक योजना प्रारंभ की जाए।''

5.59 सरकार की नकद जमाराशियों की प्रस्तावित नीलामी पर भी, सरकार और आर बी आई के बीच अधिक गहन समन्वय की आवश्यकता हो सकती है, वह केवल इसलिए नहीं कि रिज़र्व बैंक के पास सरकार की अधिशेष जमाराशियां चलनिधि के (बहुत उपयोगी) लिखत के रूप में प्रभावी रूप से कार्य करती हैं, किंतु इसलिए भी कि अंतर-संस्थागत संघर्ष के बढ़ने की संभावना हो सकती है, जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय अनुभव द्वारा दर्शाया गया है (बॉक्स V.3)।

5.60 जहाँ सरकार की ओर से व्यक्त विचारों से ऐसा प्रतीत होता है कि वह अल्पावधि में आर बी आई के पास नकदी प्रबंध रखने के पक्ष में है, अंतर्राष्ट्रीय अनुभव तथा भारत जैसे एक उभरते बाजार देश में चलनिधि प्रबंध की अनिवार्यता, इस विषय पर आर बी बाई और सरकार के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं, जैसा कि कर्ज प्रबंध के मामले में है।

IV. समापन टिप्पणी

5.61 सुधारों के प्रारंभ के बाद से भारत में राजकोषीय मौद्रिक नीति गति-सिद्धांत में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। जहाँ अर्थोपाय अग्रिम संबंधी करार (1997) ने राजकोषीय घाटे का मुद्रीकरण और वित्तीय दमन के प्रतिकूल परिणाम को प्रतिबाधित किया, एफ आर बी एम अधिनियम के कार्यान्वयन ने इसे सरकारी प्रतिभूतियों के लिए प्राथमिक बाजार में आर बी आई की सहभागिता पर रोक लगा कर, और अधिक सामान्य रूप से राजकोषीय असंतुलनों में कटौती पर एक समय-सीमा लगा कर और आगे बढ़ाया। इसी प्रकार, जून 2000 में पूर्ण रूप से एल ए एफ के संस्थापन तथा अप्रैल 2004 में बाजार स्थिरीकरण योजना ने मौद्रिक नीति उपकरणों के परंपरागत शस्त्रागार में वृद्धि की है, जैसे खुला बाजार परिचालन और देशी आधार पर उत्पन्न दबावों तथा स्वाभाविक रूप से अस्थिर पूंजी प्रवाहों से निपटने के लिए सी आर आर (राजकोषीय पक्ष सहित)। राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ओर से किये गये इन संस्थागत प्रबंधों के अनुसरण में, 2007-08 तक राजकोषीय असंतुलनों में सामान्य कमी के साथ काफी अधिक संवृद्धि, संतुलित मुद्रास्फीति तथा मांग मुद्रा दर में कम अस्थिरता थी, यद्यपि पूंजी आगमन में तीव्र वृद्धि हुई थी। हालांकि, वैश्विक वित्तीय संकट और यूरो क्षेत्र संकट के परिणामस्वरूप, राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के प्रति चुनौतियां अधिक जटिल हो गई हैं, चूंकि ऐसा महसूस किया जा रहा है कि आगे से केंद्रीय बैंकों को कम से कम आंशिक रूप से, कीमत स्थिरता के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी होने के अतिरिक्त, वित्तीय स्थिरता और राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता का सामना करना होगा (सुब्बाराव, 2012)।

5.62 उसी समय, वित्तीय बाजारों के उदारीकरण के साथ नीति उपकरणों (कभी-कभी गैर-परंपरागत) का अधिक प्रयोग और

प्रत्याशाओं द्वारा निभाई गई भूमिका में वृद्धि का संज्ञान लेते हुए, मौद्रिक और राजकोषीय परिवर्तियों सहित समष्टि आर्थिक के बीच पारस्परिक क्रिया जटिल हो गई है। फिर भी, इस अध्याय में किये गये अनुभवजन्य प्रयोग ने यह दर्शाया है कि राजकोषीय घाटे में वृद्धि, यद्यपि कुछ बाधा के साथ तथा उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल के लिए नियंत्रण के पश्चात् भी मौद्रिक नीति दर पर उर्ध्वमुखी दबाव डालने की ओर प्रेरित करती है। इस संदर्भ में, मध्यावधि में संवृद्धि और कीमत स्थिरता उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौद्रिक नीति को अधिक शीर्षांतर (हेड रूम) उपलब्ध कराने के लिए राजकोषीय असंतुलनों में एक टिकाऊ और गुणात्मक रूप से उत्कृष्ट सुधार की आवश्यकता है।

5.63 सरकार के कर्ज और नकदी प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्था पर विचार करना भी वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में एक ताजा बहस का विषय रहा है। जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय अनुभव द्वारा प्रकट हुआ है, केवल मौद्रिक नीति के साथ ही नहीं, बल्कि वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के साथ भी कर्ज प्रबंध के आपस में गुंथे हुए होने से, सरकारी कर्ज प्रबंध को केंद्रीय बैंक से पृथक करने संबंधी कार्रवाई पर अनेक मंचों से सवाल उठे हैं। संकट से मिले सबक स्पष्ट रूप से इस बात पर जोर देते हैं कि कर्ज/नकदी और मौद्रिक प्रबंध के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता है। इसके अलावा, भारी मात्रा में केंद्र सरकार के बाजार उधार, मौद्रिक प्रबंध के लिए, विशेष रूप से यदि निजी निवेश मांग बढ़ जाती है तो चुनौतियां उपस्थित करेंगे। उभरती हुई आर्थिक स्थिति तथा वैश्विक वित्तीय संकट से मिले सबक को ध्यान में रखते हुए, मध्यावधि में, भारत में सरकारी कर्ज प्रबंध के लिए संस्थागत व्यवस्था को सरकार के साथ अधिक गहन समन्वय सहित केंद्रीय बैंक की अनवरत संलग्नता की आवश्यकता होगी।